

શ્રી વિદ્યુલેખરવિરચિત્

॥ શ્રીગોકુલપટકમ્ ॥

(બીહરિસિયલકૃત મલયાપા ટીકા)

[ઓતસંઓતસામર શ્રીમદ્વિદ્યુલેખ પ્રભુચરણ શ્રીગુણાંકલ્યાં અનેક સંસારો પેઠી
જાણેકુલપટકમ્ પણ એક સુખ્યુર ભાવકૃતિ છે. પુષ્ટિમાર્ગીય લેખ્યુવેને આ મુલ અર્થો આસન
જાણતાથી સમભવ તે માટે મહાનુભાવ શ્રીહરિરાયજીએ તેના ઉપર મલયાપામાં એક લઘુ ટીકા લખી
કે આ ટીકા સાથે મુલ ગ્રંથ અવ પ્રસિદ્ધિ કરતાં અત્યંત આનંદ થાય છે.

શ્રીહરિરાયજીનાં શ્રીમદ્ગોકુલપટકમાંથી ૩૨ નામોની વિસ્તારપૂર્વક વ્યાખ્યા કરતો આ ટીકાગ્રંથ, અર્થને
એક (મુજરાત) માંથી પરમભગવદીવા મરતી શ્રી. પ્રથિપદેન અને શ્રી. શારદામહેન પાસથી પ્રાપ્ત
થયે છે. તેમને તેકામનમાંથી મળેલ છે. આ ટીકાગ્રંથની પ્રતિસિધિ કરતાં ૩૦મા નામની ટીકા, શ્રી-
વદી અનવધાનતાથી કે મને તે કારણે, આમાં લખવાની સ્તી મરેલી. લખતી વખતે આ તુરિનું અમને
કુઠું કુઠું થયેલું. ત્યારે તે એક ૩૦ મા નામ સિરાવની સંપૂર્ણ ટીકા લખી લીધી. પરંતુ ભગવદ્ગ્રંથથી
મુલ ભગવાન ન સિદ્ધિ કરાવે છે. વસોથી વડોદરા જતાં, પ. બ. શ્રી. વિભવાળદેન અમરને ત્યાંથી
અની હસ્તપ્રતમાંથી એ નામની ટીકા મળી આવતાં, તેને પૂર્ણપણે, આ ભાવસાહિત્ય-અર્થમાં મુદિન
શ્રી. પ્રેમી પાકેલા વાચન-મનન માટે પ્રસિદ્ધ કરીએ છીએ.

—સપાઠ]

તહાં પ્રથમ એક શ્લોકે સોં શ્રીઆવાયંજી ઓર શ્રીગુણાંકલ્યાં હોં નમસ્કાર કરતે હે:-

નોમિ સ્વાહાર્દસર્વેસ્વ લીલાહરવપુરિતમ્ ।
નોમિ શ્રીવિદ્યુલપ્રભુસ્વરોજુમહાનિચિમ્ ॥

અમ શ્રીહરિરાયજી કૃત હે એ હે શ્રીઆવાયંજી । મેં તુમ્કારે ચરણમલ હોં
વારંવાર પ્રણામ કરત હોં. કહેતે, ઘેરે તે તુમ હી ચર્વણ હો; ઓર હોલ નાહી. ઓર
હે શ્રીઆવાયંજી । તુમ હેસે હો ? જિનકે હૃદય મેં શ્રીહરિરાયજી શ્રીલીલારૂપ એ મહાવાંબીર
કમુદ્ર, સો રજ સોં પૂરિ રહે હો. સો અચુતરજ હે પાન કરવે હે ચોખ્ખરજીવ શ્રીગુણાંકલ્યાં
પ્રમદ થયે હે. શ્રી આપ અનુભવ કરિ અમન કે સેવક એ પુષ્ટિમાર્ગીય તિનકોં, બાંભિ
શ્રીઆવાયંજી કાન કિયે, તાહી-ભાંતિ અમન હોં, કાન કરત હે. જોસે પરમપુવાહ શ્રીગુણાંકલ્યાં
હે. તિનકે ચરણમલ હોં મેં વારંવાર નમસ્કાર કરત હોં.

યા હી આચર તે 'શ્રીગોકુલપટક' શ્રી ટીકા અપની પુદ્ધિ અનુચાર કરત હોં. કહેતે,

यथे श्रीगोकुलसर्वस्व श्रीशंकराय के उर नाम है, सो रसात्मक भावात्मक सज है ताते न्यारे न्यारे नाम के वर्णन करते है.

अब प्रथम श्लोक कहत है:—

श्रीमद्गोकुलसर्वस्व श्रीमद्गोकुलमण्डनम् ।

श्रीमद्गोकुलद्वारा श्रीमद्गोकुलजीवनम् ॥ १ ॥

अब प्रथम यह नाम कहत है— १) श्रीमद्गोकुलसर्वस्वम् । ता नाम में यह आशय है जे श्रीगोकुल जे है—धोष, ताके सर्वस्व श्रीशंकराय है. ताते यह नाम के अर्थ में वह अनन्य. गोकुलेश, गोकुलनाथ गोकुलपाश ध्यात्मिक श्रीशंकराय के नाम है. और श्रीशंकराय के आय बहुत ही प्रिय है. सो श्रीगोकुल में बहुत ही है. और संध्यासमये श्रीशंकराय आय आशयके. आय केके श्रीगोकुल में आवत है, तब अरि के में आय गोकुलन करत है. तहां मन्मथतन के आयदुःखमन के भिस हरिके अरि के में आवत है. तहां श्रीशंकराय से मन्मथतन के अर्थोय होत है. ताते श्रीगोकुल मन्मथतन के, श्रीशंकराय के अत्यंत प्रिय है.

और श्रीगोकुल कैसा है ? तहां भावलीला ते प्रसिद्ध है. जनके अंतर में छिरोरलीला, रसादिबलीला सो है. जैसे आदिबृंदावन में रासादिक लीला विहारलीला प्रसिद्ध है, तहां अंतर में गोप्य भावलीला है. सत्रपदीय आये है—'जिरिधरलाव पालने जुके कहते', तहां जिरिधरलाव, तहां पालना ? तेसे ही पालना में श्रीगुरुसंघल कहे है—'मार्गनीमानहरणम् । श्रीयशोदाए पालना जुवाचत है', ता ही समय में मन्मथतन से सजरी लीलाके अनुभव जनावत है. ताते 'श्रीमद्गोकुलसर्वस्वम्' कहे.

श्रीगोकुल में यशोदाघाट है. तहां भावलीला प्रसिद्ध है, और श्रीगोकुलमें शंकरानी घाट है, तहां दानलीला मुख्य है. ताहीते श्रीगुरुसंघल दानलीलायथापिपति श्रीयशोदापदील है. ताते श्रीशंकरानी घाट उपर श्रीगुरुसंघल बैठते, संध्या करते, लीला के अनुभव करते. सो 'दानलीला' श्रीगुरुसंघल वर्णन किये. ताभे अपुने स्वरूप जताये है—मुदा चन्द्रावली कुरुमशयनीयादि रचितुं. ताते यह भाव ते श्रीशंकरानीघाट 'दानलीला' के लिकाने और गोविंदघाट है, तहां श्रीस्वामिनील और श्रीयशुनाल के नित्यविहार ही और ताते श्रीआचार्यल महाप्रभु गोविंदघाट विश्राम करते, संध्यावदन करते. और रसक स्थल है. ताभे प्रसिद्ध है जे श्रीयशोदाए के घर के आंगन है तहां भावलीला है. और श्रीगुरुसंघल 'श्रीयशुनाटपदी' में कहे है—'जे-रमोचरः कृष्णविहार एव । जे रासादिक लीला, नित्यविहार होत है', सो अधिकारी विना अनुभव न होय. ताते श्रीगोकुल में सर्व लीला श्रीशंकराय करत है. याही ते श्रीआचार्यल महाप्रभु 'अनुश्लोकी' में कहे है—'श्रीगोकुलेश्वरपादयोः स्मरणं भजनं चापि न स्याज्यमिति मे मतिः ताते श्रीगोकुल परम रसरूप ही है. याहीते 'श्रीमद्गोकुलसर्वस्वम्' यह नाम कहे.

अब दूसरे नाम कहत है—(२) श्रीमद्गोकुलमण्डनम् । यह नाम में यह भाव है

‘मंदन’ शोभा और रक्षा करिबे के नाम है। श्रीकापुरल श्रीगोकुल की शोभा रूप है श्रीगोकुल की रक्षा करत है। सो तो प्रसिद्ध ही श्रीभाजवत में कहे है, जो पूतना ककदासुर, तृष्णावर्त धत्यादिक सब विघ्न हरि के अज्ञानके सब मनोरथ सिद्ध करत है, अज्ञानकी शोभा भदावे है। अथवा श्रीगोकुल है सो भक्त है। सो सबन की शोभा रक्षा में तत्पर रहे। कहेते, अनेक मन्त्रभक्ता श्रीगोकुल में रहत है, और जाय रहत है, तिनकी रक्षा श्रीगोकुल करत है। ताते ‘श्रीमद्गोकुलमंदनम्’ यह नाम कहे।

अथ (३) श्रीमद्गोकुलद्वारा यह तीसरी नाम है, ताके भाव यह है जो श्रीगोकुल के नेत्ररूप श्रीकापुरल है। अथवा श्रीकापुरल के नेत्रन में जो स्थाम तारा है, जहां पूतनी कहत है, सो बहुत प्रिय होत है। पलक, जिनकी अष्टप्रहर रक्षा करत है। सो श्रीकापुरल के जैसे नेत्रन की पूतनी प्रिय है। ता ही भांति सो श्रीगोकुल प्रिय है। कहेते, समस्तस्वरूप ही है।

तहां कहां पूर्वपक्ष करे जो नेत्र तो प्रिय होय; परन्तु श्री गोकुल में कहां लक्षित है जो नेत्रवत् प्रिय कहे ?

तहां कहत है जो श्रीगोकुल में श्रीस्वामिनील अपुने न्यूस विधे भिरावत है, और श्रीमनुनाल अपुने न्यूस विधे भिरावत है। सो हीतन में कहे है—‘श्रीगोकुल के निहट कहत है, लहरन ही छपी आवे।’ ताते श्रीमनुनाल तो सर्व वीला में अंतरणी धनसो मिलिके सर्व वीला होत है। सो वे दोउ स्वरूपके श्रीकापुरल जनत है जैसे अपुने नेत्रन की रक्षा पलक करत है, तैसे धन दोहन के भाव ही रक्षा श्रीकापुरल करत है। ताते ‘श्रीमद्गोकुलद्वारा’ यह तीसरी नाम कहे।

अथ चौथी नाम कहत है—(४) श्रीमद्गोकुलजीवनम्। ताके अर्थ यह है जो श्रीगोकुल के लवनप्राण, श्रीगोकुल के सुखदायक श्रीकापुरल है। कहेते, ‘श्रीमद्भक्तवद्गीता’ में सब हीर यही कहे है जो ‘जहां भेरे भक्त रहत है, तहां में सदैव रहत है।’ तहां ते अेक सखु छु आदिर नांही रहत, ताते श्रीगोकुल में तो सब अज्ञान की वृक्षमधि मन्त्रभक्ता धत्यादिक है, ताते श्रीकापुरल के लवन होय, यार्थ कहां कहेने ? भक्त के लवन श्रीकापुरल, श्रीकापुरलके लवन भक्त है। ताते ‘श्रीमद्गोकुललवनम्’ यह कहे।

या प्रकार चार नाम के निरूपण भयो। अथ दुसरी स्तोत्र कहत है—

श्रीमद्गोकुलमात्रेशः श्रीमद्गोकुलपालकः ।
श्रीमद्गोकुलजीवित्तः श्रीमद्गोकुलसंभवः ॥२॥

अथ यह नाम कहे—(५) श्रीमद्गोकुलमात्रेशः । या के अर्थ यह है जो श्रीगोकुल में आश्रय रूप पूर्णपुरुषेत्तम है, तिनके आश्रय सजरी जगत है, यह भाव करिके जो श्रीगोकुल के आश्रय करत है, तिनके कालादिक अनेक प्रकार के कष्टय सो नांही होत। कहेते, श्रीगोकुल भूलभूत है, जहां श्रीकापुरल सदैव अेकरय वीला करत है। जैसे श्रीगोकुलपीथ के आश्रय करने, ताते ‘श्रीमद्गोकुलमात्रेशः’ कहे।

अथ (६) श्रीमद्गोकुलपालकः । यह पद नाम में यह भाव है जो श्रीकृष्ण श्रीगोकुल के पालक है अथवा जो एव श्रीगोकुल के आश्रित है, तिनके ही पालन करत है, इनके दुःख में आप दुःख पावत है इनके सुख में आप सुख पावत है, और श्रीगोकुल में भक्त है, तिनके श्रीकृष्ण पालन करत है, जहां श्रीकृष्ण परब्रह्मत्व परत है, वहां अत्यंत कामल नवनीत समान पृथ्वी करि देत है, और श्रीकृष्ण को जैसे, जो समय, मनोरथ कोत है, तैसे ही वहां दूत, दूत, सामग्री नाना प्रकार की सिद्ध करि देत है; और एव मात्र ही रक्षा करत है; सो श्रीकृष्णवत् में हठे है जो 'प्रकृत्य सृष्टि के हता है, महादेव संसारहता है, और विष्णु पालनहता है,' तैसे ही श्रीगोकुल अपने एव के कष्टि कष्टि अथवा समा करि इनको पालन करत है, ताते श्रीगोकुल अमवत्स्वरूप ही है, ताते 'श्रीमद्गोकुलपालक' हठे.

अथ आगे कहत है- (७) श्रीमद्गोकुलजीलाग्निः । यह सातमें नाम में भाव है जो श्रीगोकुल के लीलाकता, विहारकता श्रीपूज्यपुरुषे तम, जिनकी लीला सर्व अवतारवत् में अधिक है, श्रीपूज्यपुरुषोत्तम ही लीला में हठु हठ अधिक नांहीं, और अवतार में अर्थात्सहित लीला जिना है, जैसे श्रीनृसिंहप्रसन्नदेव के प्रह्लाद ही रक्षा किये और श्रीरामभद्रप्रसन्नदेव के रावणविक्रम दुष्ट मारिके देवतान ही रक्षा किये और अयोध्यावासीन में भद्रा सुख किये, जोहृत्पदमत्त वेदमयोदासहित लीला किये, और श्रीगोकुल में तो श्रीपूज्यपुरुषोत्तम प्रसन्नदेव के अथवा लीला किये, साधन नांहीं, जैसे श्रीभीमन में स्वर्णपानक के अनुभव कराये है, ताते श्रीगोकुल के उपरांत और लीलाविषयमुद्रवत् अपार लीला-रस है, यह नामके भाव में 'श्रीमद्गोकुलजीलाग्निः' हठे.

अथ आठमें नाम कहत है- (८) श्रीमद्गोकुलसंशयः । यह नाम में यह भाव है जो श्रीगोकुल के आश्रय करे, तिनके मनको जो संदेह नाना प्रकार के है-अविश्वास है, ताके हरि हरिके काम, कोष, लोभ, भद्र, मित्र, भस्तर ताके नाश हरिके, अमवत्स्वरूप करावे, और जहां तांछ एव को संशय है, वहां तांछ कोटिन साधन करे, परंतु इल नांहीं, अहंते, अविश्वास आश्रयवेद्य है, सो आश्रय को अमवत्स्वरूप न होय, ताते जहां अविश्वास लये, वहां ताके कियो सर्व वृथा होय लय, सो 'अमवत्स्वगीता' में हठे है- संशयात्मा विनश्यति । ताते संशय छोडि, श्रीगोकुल में श्रीकृष्ण नित्य विहार करके है, यह भाव में लब्ध करनो, ताते 'श्रीमद्गोकुलसंशयः' हठे.

अथ तीसरे श्लोक कहत है-

श्रीमद्गोकुलजीवात्मा श्रीमद्गोकुलमानसः ।
श्रीमद्गोकुलदुःखजः श्रीमद्गोकुलवीक्षितः ॥३॥

अथ यह नवम नाम कहत है जो (९) श्रीमद्गोकुलजीवात्मा । ताके अर्थ यह जो जैसे उद्दिबन के पुति प्राण है, तैसे श्रीगोकुल उद्दिबन के प्राणवत् श्रीकृष्ण है, जैसे आत्मा और एव जो है, तिनके आश्रय में देह, उद्दिबन सम है, सो समान सुभिया है, अहंते, उद्दिबन जोहोव लय तो ता जिना निबोह होय; और एव देह

आदिर होय तो ध्रिय आधु ही ते शिथिल होय नय. सो लव कां लुभ तो परमात्मा
 हो, और हठ नांही. नीर कहां नय तहां दुःख-दोष पावे. तेसे ही और ने कुशी
 हो, सो सब श्रीगोपुल्लो ध्रिय है. तित जलन के (खल तीर्थव के) शिरोमति
 हो, और परमात्मा श्रीगोपुल्ल. ताते श्रीगोपुल्ल जल ते मुग्ध है. अक्षर के
 हो, सो नारदल ध्रुव सेां हठे है. ने 'तुभका
 त्वि उत्तम हीर जतावत हो. और हीर तो अनेक काल में श्रीगोपुल्ल प्रयत्न होय;
 और ने यह अथुराभंडल है, तहां मोरे ही काल में, मोरे ही क्षण में जदी सिद्धि
 हो. यह श्रीगोपुल्ल के घर है. ताते यह भाव सेां अपने प्रातप्रिय यहां निराजत
 हो. जैसे विचारिके श्रीगोपुल्ल में रहत है, तिनके सब मनोरथ श्रीगोपुल्ल सिद्ध करत
 है, ताते 'श्रीमद्गोपुल्लभावा' यह नाम हठे.

और हठ हठत है - (१०) श्रीमद्गोपुल्लभावाः । ताके अर्थ यह है ने श्रीगोपुल्ल व्यापि
 सेां लीला करिबे के लिये श्रीगोपुल्ल पधारै है. अनेक मन्वासी ही स्तुति ध्रुविके,
 शिवािके, शिवािके करत है. और यहां के वाक्य ही पांछना करत है ने 'हम मन्व में
 मन्वासी न लये. श्रीगोपुल्ल के संत्र रहने.' - जैसे अत्यंत लडाई करत है. और
 श्रीगोपुल्ल में रहिके मनको सहन करने. और ने लवभात्र अपने। मन खल हीर सेां
 लडाई के ओके श्रीगोपुल्ल में करावे है, तिनका जल रथानुभव हो, यजे। कालेते, कहां-
 कहां यह मत अविद्या के गुण सेां मिश्रि होय रह्यो है, तहांतांछ दुष्ट दुष्कृति करि,
 दुष्ट क्रिया सत्र करत है तहांतांछ ह्यु अमनसंभंध लुग नांही. ताहू में दुष्ट क्रिया
 सेां नांही छुटत. और मन में यह वस्तु के दुःख है ने प्रभु भाके दुःख स्वभाव ते ह्यु
 निवृत्त करेगे ? जैसे मनमें प्रभु सेां विरक्ति करे तो श्रीगोपुल्ल अपनी रक्षा के लिये
 मन्वमें सहा ही निराजत है. सो दुष्ट स्वभाव केां लुडाई के सेांपयोत्री अलौकिक देह
 करि स्वर्पानुभव करावत है. ताते यह नाम हठे - 'श्रीमद्गोपुल्लभावाः'

अल और हठ नाम हठत है - (११) श्रीमद्गोपुल्लभावाः । यह नाम के यह भाव
 है ने श्रीगोपुल्ल श्रीगोपुल्ल के जितने दुःख है तिन खलत के हता है. तथा श्रीगोपुल्ल
 में ने मन्वभाजत है, सो श्रीगोपुल्ल तेां निधुरे तेां अत्यंत दुःख करिके संत्रभत होत है.
 तिनकी आति देपिके श्रीगोपुल्ल इनसेां मिलि के सहा दुःख ही निवृत्ति करत है.
 अथवा मन्वभाजत के निरह करिके श्रीगोपुल्ल दुःखी होत है, तत्र श्रीगोपुल्लधन होलित
 के संयोग कराय संकेत सिद्ध करि खल दुःख हरत है. ताते श्रीगोपुल्ल और लहान
 के दुःखता श्रीगोपुल्ल है. ताते ने केजे श्रीगोपुल्ल में रहिके श्रीगोपुल्ल के भिबिबे
 के दुःख करत है, तिनकेां श्रीगोपुल्ल, श्रीगोपुल्ल के संयोग करावत है.

यह नाम में यह जतावे ने विप्रयोग दुःख तिन संयोगरथ ही प्राप्ति तांही.
 और श्रीगोपुल्ल लव के लौकिक-अलौकिक खल ही सिद्ध करत है. जितकेां लौकिक दुःख
 है, तिनकेां लौकिक प्राप्ति है. जिनकेां अलौकिक दुःख है, तितकेां अलौकिक प्राप्ति है. सेां
 श्रीगोपुल्ल लवभात्र केां रंजक दुःख देपि तांही सहा. ताते श्रीगोपुल्ल केां श्रीगोपुल्ल
 अत्यंत प्रिय है. ताते यह नाम हठे - 'श्रीमद्गोपुल्ल-दुःखनाः'

अम आये नाम कहत है—(१२) श्रीमद्गोकुलवीर्यतः । यह नाम का यह अर्थ है जे
 वीर्यतः नाम रक्षितः । और वीर्यतः नाम दम्भितः थाके अर्थ यह है जे श्रीगोकुल जीपर
 श्रीठाकुरल की कृपादृष्टि है श्रीगोकुल की रक्षा श्रीठाकुरल करत है। और श्रीठाकुरल आप
 भराववे के पधारत है। अष्टप्रहर पशु, पक्षी, वृक्ष सबन की रक्षा श्रीगोकुल करत है।
 काहेते, श्रीब्रह्मांडल पृथ्वी के रूप है। तिनके भीतर मज के सम्बन्ध है। सो ब्रह्मांडल
 रूप होय के मज ही भूमि, श्रीठाकुरल की रक्षा करत है। अग्नि ते, जलते, वृषभ ते,
 समयसमय में, भूमि में, ध्यास में अपने सर्व देह के सुभ छोड़िके निरंतर श्रीठाकुरल
 के सेवा-सुभ के निभारनो। ल हरिके श्रीठाकुरल प्रसन्न होय के अपने माहात्म्य
 जनावे। यह कथावचके लिखे यह नाम कहे—'श्रीमद्गोकुलवीर्यतः'।

या प्रकार तीन श्लोक के निरूपण भयो। अम और हू कहत है—

श्रीमद्गोकुलसौन्दर्यं श्रीमद्गोकुलसफलम् ।

श्रीमद्गोकुलगोप्राजः श्रीमद्गोकुलकामदः ॥ ४ ॥

अम और हू नाम कहत है—(१३) श्रीमद्गोकुलसौन्दर्यम् । यह नाम में यह भाव है
 जे श्रीगोकुल के शोभा रूप-आभूषण रूप श्रीठाकुरल है। श्रीगोकुल की चितनी गढाई स्तुति
 वेद-पुराण-शास्त्र सब करत है, सो श्रीठाकुरल के पधारते करत है। और श्रीगोकुल
 सहज ही में सुंदर है। जैसे कौलि की जिना रूप की होय, ताके बहुत आभूषण-वस्त्र
 पहोराधये तो हू लोग भयो न कहे। काहेते, वस्त्र-आभूषण ही शोभा हू अर्थ। और जे
 श्री परमसुंदर है, बाके बहुत आभूषण न होय, तो हू शोभा देव तैसे श्रीगोकुल सहज
 ही में परम सुंदर है। श्रीवसुनाल और नाना प्रकार के वृक्षसहित पुष्पिन, तहां पुष्प-
 पुष्पुकोत्तम सज्जन सहित निराकृत है। सो श्रीगोकुल के सौंदर्य जननो। ताते श्रीगोवर्धनल,
 श्रीगुसांईल सब श्रीगोकुल में निराकृत है। सब मज ही में करत विहार-या प्रकार
 अनुभव हरिके भजवहीव जाये है—'श्रीगोकुल सुभ सुभ सब करा।' जैसे ही श्रीगोवर्धनल
 भद्राप्रणु श्रीगोवर्धन की टीका-सुषोषिणी हरिके श्रीगोकुल के सौंदर्य प्रजट कियो। ताते
 श्रीगोकुल की शोभा श्रीठाकुरल में है, और श्रीठाकुरल की शोभा श्रीगोकुल में है। सो
 यह भाव में जननो जे श्रीगोकुल में श्रीगोवर्धनल के वीर अंठाकुरल मजसज्जन के
 सम्बन्ध नाना प्रकारकी लीला करत है। ता हरिके श्रीठाकुरल अत्यंत शोभा देत है। जे
 मजसज्जन जैसे है। जनकी उपमा के गुपती जे सी, सेव कौलि नाहीं। सो मजसज्जन
 जाये है—'सिय प्रकृति जेटी जमजुवटी, बारि हरि करों तेरे रूप पर।' जैसे श्रीस्वामिनील
 के सम्बन्ध श्रीठाकुरल हू अत्यंत शोभित है। सो श्रीगोकुल की शोभा देजिके लक्ष्मील
 सहित नारायणु अपना वैकुंठ छोड़ि, मज के वृक्ष वृक्ष पत्र पत्र में व्यापि रह्ये है। ताके
 यहां की शोभा कहे न अर्थ। देवतान के होम सब श्रीगोकुल के देजिके लक्ष्मी के सम्बन्ध
 है। और ल दिन में श्रीगोकुल में ठाकुरल पधारै, ता दिन में त्रैलोक्य की शोभा यहां
 ही आव रही है। ता दिन में रत्नक हू मजू के दुःख न भयो। काहेते, घर घर में लक्ष्मी
 के सम्बन्ध भयो। अपने प्रति पधारै जिन, लक्ष्मी ने सजन के अनुकूल सेवा करी, नंदायक
 अपना बांछार सब लूटायो। हरि ज्यों के त्यों सब का भयो। जैसे सजरे मज में श्री
 ठाकुरल के अनुकूल भक्त कहते, तिनके भयो। ताते श्रीगोकुल में सुभ श्रीठाकुरल

असा अजरा नज ही वाचात्मक है, परम सुंदर है। ताते 'श्रीमद्गोपुलसी' इयं भे' यह नाम है।
 अण और हु नाम कहत है - श्रीमद्गोकुलसाफल्यम् । या नाम भे' यह वाच है।
 श्री गोपुल के पति श्री गुरुरल है, सो सत्त्व के धान करत है। अपने अरक्षुभल के
 संभंध करायत है। और अन्य देवता है, सो इनके आश्रय ते' सत्त्व नांहीं। होत। सो
 इनके लोक भे' रहत है। तिन हु के माया के गुण सो भिखे है। ताते इनके श्रीगुरुरल
 के संभंध करायत नांहीं। ताते जो केहि स्वर्गलोक की कामना करिके' यसादिक, तपादिक,
 होमादिक करत है, अनेक साधन करत है, सो हु पुण्य छीन लये पाछे' देवतान के लोक
 भे' लय है। तहां हु दुःख-कलेश है। सो हु पुण्य छीन लये पाछे' हरि संसार भे'
 अवतार होयके' माया के गुण सो छूटे नांहीं। और श्री गोपुल के आश्रय ते' श्रीपूष-
 पुत्रुयेत्तम के संभंध तय होय, नज श्री आवायल और श्री गुसांभल के अरक्षुभल
 भे' वाच होय। तण ही यह आश्रय होय। सो यह सत्त्व है। जे श्रीगुरुरल के प्रागटय
 लये पाछे' तण हु यह संसार के दुःख, माया के गुण परम न करे। ताते यह नाम भे'
 यह इल कहे' जे श्रीगोपुल के संभंध ते' श्रीपूषपुत्रुयेत्तम इत्यर्थ है, तिनकी वीला के
 अनुभव होय। ताते 'श्रीमद्गोपुलसत्त्वम्' कहे।

अण और हु नाम कहत है - (१५) श्रीमद्गोकुलसोप्राणः । यह नाम भे' यह वाच
 है जे श्रीगुरुरल श्रीगोपुल के प्राण है। कहेते, 'गो' नाम गाय के, सो वाचन के
 अक्षर श्रीगुरुरल है। गाय प्राणप्रिय है। गायन ही सेवा ते' श्रीगुरुरल अत्यंत ही जेवि
 प्रसन्न होत है। ऐसी गाय श्रीगोपुल भे' बहुत ही सुख पावत है। और 'गो' नाम
 ईद्रियन के प्राण प्रिय है, कहेते, प्राण जिना ईद्रियन भे' चैतन्य नांहीं। प्राण-आश्रय
 ईद्रियन के है। सो जैसे ईद्रियन है, ईद्रियन के आश्रय प्राण नांहीं। तैसे ही श्रीगुरुरल
 के आश्रय अजरा श्रीगोपुल, गाय, नज है अजन के प्राण आयु ही है। और 'गो'
 नाम पृथ्वी के है। सो पृथ्वीरूप श्रीयशे दाल हु है। तिन हु के प्राणप्रिय श्रीगुरुरल है।
 अपने प्राण हु ते' अधिक रनेक श्रीयशे दाल के श्रीगुरुरल भे' है। पर भे' जे जे पदार्थ
 है, तिन अजन के श्रीगुरुरल भे' विनयोज करत है। और 'गो' नाम प्राणहु हु के
 है। सो प्राणहु तिनके कहेते जे प्राण के देणे-जाने, इन ही का आश्रय करे। और श्रीगोपुल
 भे' तो पूषपुत्रुयेत्तम सो निराकत है। ताते प्राणहु हु के है आश्रय यकी है। ताते
 प्राणभान के लवनप्राण श्रीगुरुरल है। सो श्रीगोपुल के आश्रय जिना श्रीगुरुरल के
 आश्रय न होय। और 'गो' नाम अक्षर हु के है जहां श्रीगुरुरल निराकत है। असा
 अक्षर हु अक्षर है। जितने अक्षर है तिन अजन के नाम 'गो' कहेते। ताते अक्षरही
 के लुडव भे' अक्षर श्रीगुरुरल निराकत है। अक्षर के प्राण है। ताते अक्षरही ही
 सेवा अपने प्राण जानिके' करे तो श्रीगुरुरल ही प्रप्ति होय सो अक्षरशेभन नज-
 अक्षर है। जिनके लवनप्राण अक्षर श्रीगुरुरल ही है। सो अक्षरअक्षर के वाच सो सेवा करे,
 और अक्षरअक्षर के अरक्षुभल के आश्रय करे तो अर्वानुभव होय। ताते यह नाम
 कहे - 'श्रीमद्गोपुलसोप्राणः'

अण और हु नाम कहत है - (१६) श्रीमद्गोकुलसाम्बः । यह नाम भे' यह वाच है
 जे श्रीगोपुल के सर्व अनारथ पूषकता कामरित, कवपुष श्रीगुरुरल है। और कहेते

ने कामधेनु है, स्वपवृक्ष है, मिंतामणि है, सो हूँ मनोरथ पूरन करत है। तहां कहत है
 ने ये लीकिक कामना पूर्ण करता है। ताके पाये तें अत्यंत दुःख होय। कहेते; देवलोका में
 ईंद्र जहां रहत है, तहां कामधेनु हूँ है, स्वपवृक्ष हूँ है, और अमृतपात्र हूँ करत है
 परंतु अपने शल्य के बिचे अत्यंत दुःखी है। सो श्रीभामवत में प्रसिद्ध है। सक्षय के
 लय हरि ईंद्र पुर कोठि, पहाड ही इंदरा में लय छिपत है। तातें धनके पाये तें निरालं
 नांहीं कोत। और श्रीभामवत में जहां स्वमतमणि के प्रसंग है, तहां मणि के दोष
 सो श्रीकापुरल से नाव छूटयो। तब श्रीकापुरल सदेह छुटाये है। तातें ये (स्वपवृक्ष
 मिंतामणि जादि) ने कामना पूरन करत है, तामें अनेक दुःख है। अमृतपात्र नाव छूटे।
 और श्रीभामवत के कामधेनु, मिंतामणि, सुरततु सब मनोरथ पूर्ण करता श्रीकापुरल है।
 जिनके भिले तें सक्षय तप ताप हरि कोत है; स्वपवृक्ष, अमृत पात्रे पात्र कोत है।
 सक्षय अमर होय, ताहां दुःख कबोय कब हूँ न होय सो श्रीभामवत में जैसे मिंतामणि
 के आशय करे तो निरालं होय, सब मनोरथ पूरन होय। तातें वह नाम हवे-
 'श्रीमद्भोगेन्द्रकामधः'

श्रीमद्भोगेन्द्रकामधः श्रीमद्भोगेन्द्रकामधः ।

श्रीमद्भोगेन्द्रकामधः श्रीमद्भोगेन्द्रकामधः ॥२॥

अम और हूँ नाम कहत है- (१७) श्रीमद्भोगेन्द्रकामधः । वह नाम में यह लय
 है ने 'शकेश' नाम अंश्रमा के है। सो अंश्रमा में यह लय है ने द्विषय में सर्व
 रक्षण के सोपत है, सो अंश्रमा अमृत की वृष्टि करके सब वनस्पति के सोपत
 सीतल करत है। ताप की निवृत्त करत है-धर्माधिक लय लीकिक अंश्रमा में है; और
 श्रीभामवत के अंश्रमा श्रीकापुरल है। सो अलीकिक अंश्रमा है। सो मज विरह-ताप
 अंतत कोत है। तब श्रीकापुरल अंश्रमा अपने अमृतपात्र के पात्र कषाय सीतल
 करत है। विरह-ताप हरि करत है। और तपसाव हरिके करत अये लय दुःखी, सो
 श्रीभामवत के अंश्रमा के आशय करत है; तिनके सक्षय ताप हरि कोत है, अमृतपात्र के
 अंश्रमा कोत है और लीकिक अंश्रमा की कला छीन कोत है, शक्ति है। शिशुमार
 के आधीन लकी रती है। जितने प्रमान है, तितने ही महे। अभावस के विन प्रसंग
 नांहीं। वह लीकिक अंश्रमा में अनेक दोष है। सो श्रीभामवत के अंश्रमा में नांहीं। वह
 तो सब लय ही है। जिनके जोरद प्रसंग अये पाठे हरि अंश्रमा ताप कषय न कोत
 अलीकिक के निवामक है। अंश्रमा मजलजान के अंश्रमा लीकिक करत है। श्रीभामवत
 भूमिद्वय ने नम, तहां स्थित है और अंश्रमा, कुमुदिनी के सुषदायी है, तैसे
 यथोदाह, सभा, सब मजलजान, तप, जादि कुमुदिनी, तिनके प्रसंगकता रूप है।
 तातें यह नाम हवे- 'श्रीमद्भोगेन्द्रकामधः'

अम और हूँ कहत है- (१८) श्रीमद्भोगेन्द्रकामधः । वह नाम में यह लय है
 श्रीभामवत में ने पूर्णपुत्रोत्तम है, तिनके लय-महिमा अत्यंत के जावे नांहीं, श्रीभामवत
 की महिमा अपने मन हरिके अनिवे में जावे नांहीं। इजिवे तो शेष के पार नांहीं
 सुनिवे तो भावार्थ के पार नांहीं। सो 'पद्मपुराण' में श्रीभामवत कहे है ने श्रीभामवत

सुख, लक्ष्मीनारायण सुख कहत है, और पार नांही पावत. और 'पाराहपुराण' में
 पृथ्वी से सभरे मज है माहात्म्य कहे. पाछे कहे जे श्रीगोकुल ही बीबा
 में भेरे सामर्थ्य नांही बुद्धि अनुसार में कही. ताते श्रीगोकुल ही बीबा तह
 वे नांही. और जे कौञ्ज दूसरे देय में रहिके श्रीगोकुल ही बीबा चितन करत
 भावसहित रिशह मत है, तिनके श्रीगोकुल संसारसिंधु ते तारिके, न्यारे करि,
 जे सभन साधन, लीलास के अनुभव कावत है. जैसे अग्निपुष्करिका के
 पुषे तम के सभ भाव भये, तब कुनके अनेक प्रतिबंध हरि हरिके 'रासप' आधासी
 अनुसार धनके मनोस्य पूरा किये. तेसे ही श्रीगोकुल के भाव जमे होय,
 मनोस्य सर्वथा पूरा करे. ताते यह नाम कहे- 'श्रीमद्गोकुलनारायण'

अब और हु नाम कहत है- (२२) श्रीमद्गोकुलनारायणः । यह नाम में यह भाव है
 श्रीगोकुल कर्मरक्षा के. श्रीगोकुल प्रसादप होयके सभ साधे भोज करत है.
 कर्मर के यह साधव है जे सभ के देये ते प्रकृति होत है और कर्मर सदा
 में ही रहि, तेसे ही श्रीगोकुल से रासप बल है, महा अलौकिक कर्मरक्षकप,
 जे सभे नांही. तामें नानाप्रकार के भावात्मक मजबूत रहत है, जैसे नंद,
 शाण्ड्य, शुक, योगीश्वर पुत्रभावमग्न रहत है, सभा भितभाव हरिके अपने
 ही जे कर्मर है. जे सभभाव में मग्न है. और प्रकृतिके कर्मर के दोय भाव है-
 सौम्यता. जे विप्रयोगात्मक कहते, प्रथम विप्रयोग भये ताते सौम्यतरस
 सिद्धि लय य. प्रथम योगीश्वर के प्रतिभाव, से ही नानाप्रकार के कर्मर है. तिनके
 भाव के लक्षा आंकुल अनेक कर्मर होय सभन के रस के पूरा करत है. नंद-
 शाण्ड्य के भावस्य सों सुख देत है, सभान के अनेक सुखे जेव्यारन लीला
 देत है. प्रकृतिके सभ साधक लीला हरिके योस्य वर्ग के तनुन होय के
 मनोस्य पूरा किये. जैसे अलौकिक बल, तामें जैसे अलौकिक नानाप्रकार के कर्मर
 तहां में कर्मर. जैसे अलौकिक कर्मर है, ताते श्रीगोकुल अलौकिक है, ताते यह
 कहे- 'श्रीमद्गोकुलनारायण'

अब और हु नाम कहत है- (२३) श्रीमद्गोकुलनारायणः । यह नाम में यह भाव है
 श्रीगोकुल के नाम मित्रे ही श्रीगोकुल ही स्तुति है. से श्रीगोकुल के बहुत ही
 है. शके है, अक्षरसहित श्रीगोकुल ही स्तुति है, से श्रीगोकुल के बहुत ही प्रिय
 से 'नामवली' में श्रीनारायण महाप्रभु कर्मसंघी नाम कहे है- नंदनंदन,
 नानंदन, योगीश्वरवदरम, प्रकृतिक. जैसे अक्षरसहित स्तुति ते अक्षर ही कर्मर
 प्रभु जेहि ही कृपा करत है. से भावगत में प्रसिद्ध ही है. देवस्तुति में, अक्षरस्तुति
 विद्वस्तुति में. और सभन में मित्रि मजसंघी स्तुति ह कहते, श्रीगोकुल
 अक्षर के रस में मग्न है. से जब प्रकृतिके सभ संघ सहित श्रीगोकुल ही
 स्तुति करे, तब श्रीगोकुल बहुत प्रसन्न होय, जे भेरे अक्षर के नाम सेत है. ताते
 नाम कहे- 'श्रीमद्गोकुलनारायण'

या प्रकार पांच श्लोक के निरूपण भये. अब और हु कहत है-

अथ और हूँ नाम कहत है—(२१) श्रीमद्गोकुलसंगीतः । यह नाम में यह है जो सुंदर गीत से ही है, जमे श्रीगोकुल के संबंध है। जो संबंध कहा है जो लीला विना और अवत है, जो कैसे भालत है ? कैसे हादुर अज्ञान हरिके है, कहते, श्रीगोकुल ही लीला प्रसिद्ध है, श्रीमः अवत आदि जमे श्रीगोकुल के है, जके गान से, अल से काटन केटि लयन के उदार लये जैसे पदांश प्रक परंतु कृपा अनुभव विना कहाँ ते सिद्ध होय ? जो पुष्टिभाज में अरन अववदीय के संज होय, तज श्रीगोकुल ही लीला के अनुभव होय, ताते साधो यही है जो अष्टछाप, बीरासी वैष्णव, पुष्टिबीजा के जारे है, जैसे उत्तम है ताते यह नाम कहे—'श्रीमद्गोकुलसंगीतः'

अथ और हूँ कहत है—(२२) श्रीमद्गोकुललास्यकृत् । यह नाम के यह भाव 'लास्य' नाम गीत वाचित्रयुक्त अत्यंत है, मल स्नेहलरित नृत्य के है जैसे ल भीन के अक्षय स्नेह है जो ल विना भीन अक्षय हूँ रक्षि अक्षय नांही, तैसे श्रीगोकुल विना श्री कपुरल अक्षय हूँ और हीर नांही' इत, गोकुल में स्नेह नृत्य कियो ही करत, और अपने अक्षयन के हूँ श्रीकपुरल यही शिक्षा करत है 'श्रीगोकुल में स्नेह करे, तज मेरी प्राप्ति होयगी' कहते, जहां अति हूँ मोहित श्रीकपुरल से विनती किये, तज श्रीकपुरल यही आशा दिये जो 'जम में मज में होज', तहां मेरे यंगाररअयुक्त स्वरूप के अनुभव होयगे, और अजिंकुम श्रीकपुरल यह आशा दिये जो 'मज ही में तुम्हारे यह मनोरथ सिद्ध होयगे, पूष्यपुत्रोत्तम के प्राप्ति होयगे' या प्रकार हरिके अवन के यंगाररअ अपूर्णपुत्र के अनुभव के उपाय बताव्यो, जो मजकत के भाव विना यह रक्ष ही प्राप्ति ताते यह नाम कहे—'श्रीमद्गोकुललास्यकृत्'

अथ और हूँ कहत है—(२३) श्रीमद्गोकुलजीवात्मा । यह नाम में यह भाव श्रीगोकुल के भावात्मक स्वरूप है, पाके भाव से अवन करे तो श्रीपूष्यपुत्रोत्तम संबंध होय, जो अहा मज के हृदय में निरावत है, जो स्वरूप महारस रूप के रक्ष पात्र विना न रहे, ताते जो मथुरा ते यह स्वरूप आयो, पाके भीतर स्वरूप रक्षो, पाछे अक्षय अथुरा के स्वरूप पधायो, तज मज के स्वरूप तो में रक्षो, परंतु रक्ष रूप स्वरूप पात्र विना न रहे ताते या स्वरूप के पात्र तो है, ताते मजकतन के हृदय में रक्षो, कहते, जैसे मजकतन के स्वरूप भाव तैसे ही श्रीकपुरल के संबंध ते मजकतन हूँ के स्वरूप रक्षात्मक है, ताने भिलि के मज में अहा ही मज के लयत्मा होय के स्थित है, जो अहां जो मज के भावसहित भावना होय, तज वा स्वरूप ही अनुभव होय, जैसे पुष्टिभा श्रीभावायल महाप्रभु मजकतन के भाव सेव ही रीति प्रकट करी है, त श्रीपूष्यपुत्रोत्तम ही प्राप्ति होय, ताते मजकत ही भावना से अवन करने 'श्रीमद्गोकुललास्यकृत्' यह नाम कहे.

और हूँ कहती हूँ—(२४) श्रीमद्गोकुलपौष्कः! यह नाम में वह भाव है जो
 के पोषक श्रीगुरुल है। जैसे माताताया पुत्र के पोषण करती है। कहते,
 में श्रीनंदरायल ही माय रहती है। से श्रीगुरुल में बहुत ही प्रिय है। उनमें
 रहती से पौषत है। भूषी न रहे, वाको ध्यान राजन है। अपने अक्षर से
 है। वेणु जलजके ता हरी अमृततरसपान कराये पोषत है। और श्रीगुरुल में
 रहती है, से। अपने घर मुमुक्षु की वज्र करिके विरह से जगजग वतप
 तम काहू भिन्न करिके श्रीगुरुल वाके घर पधारि, नेत्र की में मंदहास्य करि,
 अनेक भाव करि अताइय लक्षण के प्राण के पोषक है। और मज में जो
 अनुकूलित है, तिनमें सब प्रकार से पोषत है। से 'अक्षितवर्द्धनी' अथ में
 यल महाप्रभु कहें है—

“वाचसंमायनार्या तु नैकान्ते वास इष्यते ।
 हरिस्तु सर्वतो रक्षां करिष्यति, न संशयः” ॥

कहते, के लवणुद्धि से द्रव्य करती है, अथवा श्रीगुरुल में के ली अनंत नांही,
 के पोषण करती है। तो जो लव श्रीगुरुल के आश्रय करिके रहे है, तिनमें
 का पोषण करे ही करे। ताते यह नाम कहे—श्रीमद्गोकुलपोषकः
 प्रकार से श्लोक के निरूपण लये। अज और हूँ कहती हूँ—

श्रीमद्गोकुलहृत्स्थानं श्रीमद्गोकुलसंवृतः ।
 श्रीमद्गोकुलहृत्पुष्टः श्रीमद्गोकुलमंरितः ॥७॥

(२५) श्रीमद्गोकुलहृत्स्थानम् । यह नाम में वह भाव है जो श्रीगुरुल है जो है।
 के हृत्स्थान ही है ताते श्रीगोवर्द्धन, श्रीयमुनल, मजभूमि, वृष सब
 रूप ही है। कहते, अक्षा में आशा देके अक्षा द्वारा सृष्टि प्रकट करी है। से
 सप्त तृतीयरक्षध' में प्रसिद्ध ही है। और मज ही सामग्री सत्र श्रीगुरुल के हृत्स्थ
 ही है। कहते, सीतासृष्टि ही सामग्री में श्रीपूर्वपुत्रोत्तम के मन करि हृत्सरो
 प्रकट लये रसज्ञ, तिनमें अनेक स्वरूप सीतामध्यपाटी प्रकटे। से मज में
 है। ताते यह नाम कहे 'श्रीमद्गोकुलहृत्स्थानम्'

और हूँ कहती हूँ—(२६) श्रीमद्गोकुलसंवृतः । यह नाम में यह भाव है जो
 श्रीगुरुल ही के संवर्धी वीलाके पथ है। जो वाता करती है। से श्रीगुरुल ही,
 कहे अमुद्र में है जो और हूँ अनंत नांही। और आप 'रासप'आभ्याधी' में
 जो 'भेरो प्राकटय तुम्हारे लिये है, और कारण नांही।' ताते श्रीपूर्वपुत्रोत्तम
 मजलक्षण ते वैधित होय रहे है, और मजलक्षणके योगनीय है। ताते से
 लक्षण के भाव है, ताही प्रकार से तैसा ही मनोरथ श्रीगुरुल पूर्ण करती
 है यह नाम कहे—'श्रीमद्गोकुलसंवृतः'

और हूँ कहती हूँ—(२७) श्रीमद्गोकुलहृत्पुष्टः! यह नाम में यह भाव है जो
 में श्रीपूर्वपुत्रोत्तम निराजत है। श्रीनंद-वयोदाएके घर में। कहते, ल
 श्रीनयोदाए में आया प्रकट लई है, से श्रीगुरुल के प्रकट लये उपजांव होय

बही पाछे ताते यह अननो जे भाया जडेवी न लरि; श्रीठापुरलसहित प्रगत
 तहां केछि कडे जे क्यो अनिये ? तहां कहत डे जे जडेवी भाया प्रगत लरि केछी
 भाया के उपलये इम श्रीयथोदाह के स्तन में होता, से श्रीपूज्यपुत्रोत्तम क्यो म
 करते ? और श्रीपूज्यपुत्रोत्तम के इधन लर डो नाडीं होता. कहेते, लरकों मा
 डे. जितनी भाया श्रीठापुरल हरि करे, तितनो इधन होय. मज में लकों डेसो
 लयो, तिनकों तैसो ही इधन लयो. ताते मज डों यह भाव लयो जे पुष्टिपुत्रो
 डे, धन ही ते हमारे मनोरथ सिद्ध होयेजे. से पुष्टिपुत्रोवा करि. स्वर्गपानड के अ
 मजलक्षण डों कराये. ताही ते श्रीभायायल के घर ही रीत के लवाये. प्रगत डे
 में डे मयांसासहित, ताके भीतर पुष्टिमात्र-मजलक्षण ही रीति-भावना से प्रगत
 डे. ताते अत्रवहीय भाये डे- 'अष्टि श्रीगोपुत्र ते' प्रगत लरि. ताते श्रीगोपुत्र के अ
 विना पुष्टिभक्ति न होय. श्रीगुसांईल के वचन डे-

सदा सर्वात्मना सेव्यो भस्वान् गोकुलेश्वरः ।
 समर्तव्यो गोपिकावृन्दे क्रीडन् वृन्दावने स्थितः ॥

और श्रीभायायल महाप्रभु कहे डे-

अतः सर्वात्मना शब्दु गोकुलेश्वरपादयोः ।
 स्मरणं भजनं चापि न त्याज्यमिति मे मतिः ॥

जैसे पुष्टिपुत्रोत्तम श्रीगोपुत्र के धरर उदा विहार करत डे. तिनही ते
 रस के अनुभव होयजे. ताते 'श्रीमद्गोपुत्रोत्तमः' कहे.

अज कहत डे- (२८) श्रीमद्गोकुलमोदितः । यह नाम में यह भाव कहे जे श्री
 के आनंददाता श्रीठापुरल डे. अ दिन ते श्रीठापुरल व्यापिपैकुठ ते मज में प
 से अनेक कालके मनोरथ लक्षण के पूज्य लये. मजलक्षण के ताप हरि लयो.
 अपने न-म के साथे अनि ताप निवृत्त करत डे. ता दिन ते मज में घर घर
 के उत्सव आनंद लयो. श्रीगोपुत्र में श्रीवगुनाल अत्यंत प्रदुष्टित होय रस
 लहावत डे. और आयन डों अत्यंत आनंद लयो, इधरस लहुत लहयो. ग्याल
 रंभार हरिके कंवरि भरि हरिके श्रीठापुरल के इधन करन आवत डे. और मजल
 आनंद में मज होय, गृहादिक अंधन तोडिके, मंगल आज सिद्ध हरिके आयये
 के पास आसके श्रीठापुरलके इधन हिये ताही समय में सरं लुपय के भाव
 ताते अत्यंत आनंद पाये. जैसे श्रीठापुरल घर घर आनंद श्रीगोपुत्र में रत डे.
 यह नाम कहे- 'श्रीमद्गोपुत्रोत्तमः'

जैसे बात श्लोक के निरूपण लयो. अज आठमो श्लोक कहत डे-

श्रीमद्गोकुलमोदीशः श्रीमद्गोकुलसहितः ।
 श्रीमद्गोकुलमोदीशः श्रीमद्गोकुलसर्वज्ञः ॥ ८ ॥

अज और डे नाम कहत डे- (२९) श्रीमद्गोकुलमोदीशः । यह नाम में यह भा
 में श्रीपूज्यपुत्रोत्तम श्रीगोपुत्र के और श्रीपूज्य के धरर डे, नाम पति डे.
 श्रीगोपुत्र में अत्यंत प्रदुष्टित होये. जैसे श्रीगोपुत्रोत्तम पति हरिके मुखा के और

... मनुष्य है; जगत् में है; परंतु श्री कों कथकू मुझ नाहीं. तैसे ही श्रीगोपुत्र
 ... श्रीक.कुं.ल है. गढेते. जहांतांछ व्यःपरैकुठ तें श्रीगोपुत्र श्रीगोपुत्र मे नाहीं
 ... है. तहांतांछ अपनी महालयप्रसाश श्रीगोपुत्र ने न जताये. सो यह पतिव्रत
 ... है जो अपनी सुंदरता. व्यतुर्ग. अतिप्रिय है सो अपने पति के ही समुप
 ... सिद्ध करि देत है. और ताका प्रसार के कुंजसकेत, श्रीगोपुत्र और मज्जकान
 ... है. जहां लेखी वीडा, ता वीडा के अनुसार होय. श्रीगोपुत्र, श्रीगोपुत्र कों
 ... अनुकूल है. ताते मज्जकान के, श्रीगोपुत्र के अत्यंत प्रिय है. ताते यह
 ... है. श्रीमद्गोपुत्रगीपीय

अथ (२०) श्रीमद्गोपुत्रगीपीयः । यह नाम में यह है जो स्वरीत से श्रीगोपुत्र
 ... श्रीगोपुत्र के वाहन-पालन करे है. या ही रीत से श्रीगोपुत्र के वाहन-पालन आध
 ... श्रीगोपुत्र करे है. इस द्वा प्रेरित अमृत के उपद्रव के शान्तकर्ता और श्रीगोपुत्र के
 ... आप ही है, और यह अनु कों श्री अपने आधीन रहे है. श्रीप्रभुन ही
 ... अनुसार मज्जकान आप के अनुकूल होय है. वषां, शरद, हेमंत, शिशिर, वसंत
 ... श्रीम अति यह अनु श्रीप्रभुन के आधीन होयके अपने अजोपांज प्रकृतिवत करे
 ... 'मज्जकान' में अंश ही कथा पूर्व रीत से प्रकृतिवत दुर्घ है और शरदःशु
 ... मज्जकान है. अंश, मज्जकानगी लये है श्रीगोपुत्र, मज्ज, श्रीयमुनाल, वन-उपवन सज
 ... मय कये है. समस्त मज्जकान्ति श्रीप्रभुन के अनुकूल लये है. जम श्रीगोपुत्र
 ... करिये कों श्रीयमुनाल के तीर पे पांज.धारे है. तम मज्जकान्ति अपने
 ... के मज्जकान धारन करिके आनंद अनुकूल है; श्रीमिरिवाजल हव, हव सिद्ध
 ... गेग धरे है; श्रीप्रभुन अपने मनोरथ के जोज श्रीगोपुत्र कों धरिये के
 ... धारण में आवे है, ता मिरियां श्रीगोपुत्र वनहीडा के विषे संकेत करे है,
 ... वन वांति ही वीडा करनी होय. तहां ता वांति के चिह्न प्रदर्शित करे है. गुमलावना
 ... पीपल मिया नी. पुं के लिये मे आवे नाहीं है या वांति श्रीगोपीजन आदि
 ... कों प्रिय जने है. और श्रीगोपुत्र ने. समस्त के प्रिय है ही. या वाच के
 ... 'श्रीमद्गोपुत्रगीपीय' का नाम उडे.

अथ और ११ उक्त है - ११. श्रीमद्गोपुत्रगीपीयः । यह नाम में यह भाव है जो
 ... श्रीगोपुत्र के मनुष्य लक्षण लक्ष्मी है ताके जो.नारायण करत है. और श्रीगोपुत्र है
 ... साक्षात् व्यःपरैकुठ है. तहां जोग श्रीगोपुत्रपुत्रोत्तम करत है. ताते श्रीगोपुत्र कों
 ... लक्ष्मी अपने मन में जगत् पालन है. सो अपने वैकुंठ से मज्ज में धर धर
 ... दिया. नारायण सहित सब वीडा देणिके मन में अत्यंत प्रसन्न है. सो सदा
 ... वैकुंठ में परस्पर, लक्ष्मीनारायण सहित मज्ज ही वीडा के स्मरण करते है. गढेते,
 ... आदि तथा अंश जितने अरतः है, सो केवल शुभ करिके, केवल हवा करिके,
 ... करिके प्रकटे है, सो तैसे ही तिनके जोज करिये में लोभ लज्ज है, तैसी
 ... है, अयांसाहित. और श्रीगोपुत्र में साक्षात् पूर्वपुत्रोत्तम वीडा धरिये धारै,
 ... श्रीगोपुत्र के मज्जकान पुत्र है. मज्जकान्ति रक्षक श्रीगोपुत्रोत्तम के जोनमुक्त
 ... ताते मज्ज में जो वीडा सामग्री है, जो श्रीगोपुत्र के विषे ही है. श्रीगोपुत्र

श्रीयमुना-सो पुष्टमहासङ्घ, जहां अनेक कुंज, द्रुम, वृता, कंठरा, पशु, पंछी तथा अनेक मज्जकत परम योला देत है. योला के इतन करिके कामदेव-रति छू ले. भाष रहे है. और श्रीयमुनाए जहां अत्यंत योला देत है. तिनको देणिके श्रीपुष्पुपुत्रे तम लोलाय रहे है, तो तहां लक्ष्मी कौन जिनती ? ताते ले सोच श्रीगोकुल में श्रीकुंज मज्जकतन संभ करत है. सो दारका-राजलोला हूँ में नाहीं. सो युगनन में प्रसिद्ध है. काहेते वहां सेरद कनार ओक सो रानी, और आठ पदराणी जैसे. राज्यस्थित है ताते श्रीगोकुल की बीला मज्जकतन हो भाव, यह रस, यह सोच कथहुँ नाहीं है ताते यह नाम ठहरे- 'श्रीमद्गोकुलसर्वश्रीः'

अब आगे और कुछ कहत है- (३२) श्रीमद्गोकुलसर्वकृत् । यह नाम में तो अनेक भाव है. काहेते, सर्व बीला श्रीगोकुल की है, सो श्रीगोकुल में है. न न अवतार में लक्षण प्रकट होय है ले ले बीला किये, सो सर्व बीला, मज में सर्व मज्जकतन को अनेक उपाय करि सद्ध छी में करि दिभाये. ताते मज्जकतन कथं भाव करिके ओक श्रीपुष्पु की लक्षण किये, जेये हमारे क्वं मनोरथ पूष्पु करेगे और ले बीला श्रीगोकुल मज में मज्जकतन के संभ किये. रासादिक, मानादिक, बीरकरन, और निकुंज में नाना प्रकार की वेदभयोडा है। उद्वरण करिके करी, सो बीला कथहुँ नाहीं. काहेते, और अवतार श्रीपुष्पुपुत्रे तम होय तो अभयोडबीला होय ताते व्यापिवेकुंज में ले श्रीपुष्पु-पुत्रे तम बीला करत है, सो छी प्रभु मज में प्रकट होय है श्रीयमुनाए के तट पर स्थित होय अनेक बीला करत है. सो बीला लवोपरि है. सो श्रीगोकुल में मज्जकतन है, तिनके वरषुकमल की रस, ताके आश्रय ते प्र. ११ होय. सो यह आलय सिद्ध होयवेरी योयता एव में नाहीं. अब श्री आचार्य ए महाप्रभु के वरषुकमल की आश्रय होय, निवेदन लये पाठे योयता होय, जैसे श्रीगोकुल सर्व बीला की डिगाने, ताते सर्व भाष करिके श्रीगोकुल की बीला, तिनको चिंतन करनो. सो श्रीआचार्य ए महाप्रभु कहे है- सर्वदा सर्वभावेन भजनीयो ब्रह्मचरिणः । स्वस्यायमेव घर्मो हि नाप्यः क्वापि कदाचन ॥

परमधर्म लवोपरि यह है ले मज के पूष्पुपुत्रे तम में भावसहित सर्व बीला की अनुभव करनो. ताते यह नाम ठहरे- 'श्रीमद्गोकुलसर्वकृत्'.

या प्रकार आठ श्लोक की निरूपण लये. अब 'श्रीगोकुलसर्वकृत्' के पाठ की हल कहत है-

इमानि श्रीगोकुलेशनामानि वदने मम ।
वसन्तु सततं चैव लीला च हृदये सदा ॥ ९ ॥

यह ले श्रीपुष्पुपुत्रे तम के नाम लीलासहित, श्रीगोकुलसर्वकृत्, सो श्रीगोकुलसर्वकृत् कहत है ले भेरी वदन ले सुभकमल, तामें सतत ले निरंतर वास करे। काहेते, मैं सर्वसाधन करिके रहित हों, ताते यह ले नाम है. तिनको भेरी रचना अष्टप्रहर स्मरण करे। सो धन नाम ही के चिंतन से श्रीपुष्पुपुत्रे तम ले बीला श्रीगोकुल में करत है, सो लीलासहित भेरी हृदय में वास करेगे. यह भेरी निश्चय है ताते यह नाम के भेरी वास-वा-उच्चार करत हों. तामें नाम ठहरे लीला है. ताके अलगाय यह है ले भेरी

हृदय में यह मनोरथ है जो सत्र रसन में श्रेष्ठ जो शुंभाररस, सो ही बीजासहित, जो श्रीस्वामिनील सहित निकुंज मंदिर में विहार करत है, सो बीजा भरे हृदय में जसे। पेशकला श्रीपुरुपुत्रोत्तम रसात्मक तेसे ही पेशकलांजल सहित श्रीस्वामिनील—ये दोही मिलिके या प्रकार अनेक भाव सों पूजा, ताते अतीस नाम करिके यह 'श्रीगोकुलाष्टक' में वर्णन किये। ताते यह 'श्रीगोकुलाष्टक' में जो नाम है, सो अथ बीजासंज भी है।

ताते धन नाम के आश्रय तें सर्व बीजा के अनुभव होयजे, सर्व बीजा सदा ही हृदय में स्थित होयगी। या प्रकार श्रीगुसांथल प्रतिज्ञा करिके यह 'श्रीगोकुलाष्टक' प्रमट किये। यह कहिके अपने अंगीकृत सेवकन के। यह जताये जो यह 'श्रीगोकुलाष्टक' के पाठ निरंतर करे। और यह ग्रंथ में 'अतीस नाम' है, सो परम रस रूप है, तिनके हृदय में राखे। धन नाम ही के आश्रय तें पुष्टिहीन सर्वोपरि जैसे श्रीपुरुपुत्रोत्तम बीजासहित हृदय में जायके जसे।

सो श्रीहरिदासल अथ कहत है जो श्रीमायाल महाप्रभु और श्रीगुसांथल के प्रसन्नकमल ही रज, ताके नभरकार करिके जैसे भेरी बुद्धि में श्रीमहाप्रभुल के अनुग्रह तें स्मृति कर्ष, सो में कबो। कहते, यह जो शुंभाररसात्मक अतीस नामन में अपार भाव है, सो श्रीगुसांथल के हृदयकमल में स्थित है। सो एव के प्राप्ति मदान दुर्लभ है। ताते यह 'श्रीगोकुलाष्टक' के पाठ तें अनेक अविद्या करिके हृदय में भेस है, तिनके हरि करि सर्वात्मभाव होय सो यह प्रताप 'श्रीगोकुलाष्टक' के नाम के है ताते वैष्णव के भावसहित यह ग्रंथ के पाठ करने। कहते, यह श्रीगुसांथल के वचनामृत महा-स्वरूप 'श्रीगोकुलाष्टक' है, ताते गोप्य राखने। ताते उनही कृपा तें भक्ति ही इवित होय।

॥ इति श्रीविदुलेश्वरविरचितं श्रीगोकुलाष्टकम् ॥

[ताके ऊपर श्रीहरिदासजीकृत व्रजभाषटीका संपूर्ण]

* स्वप्नदर्शनम् *

अनुवाक

म. म., अध्या. श्री देशवराभ डा. शास्त्री
'विद्ययायस्यति'

[गीतसंजीतसागर श्रीमद्दिव्यप्रभुकरविरचितं श्रीगुरुसंघट्टन संस्कृत प्रकरणे अक्षरानां स्वप्नदर्शनम् नामक आश्रयं ज्योतिषी विदितं मन्यतेति । गुणवती आया-स्यद्वित्वात् संशोभः अग्नि संप्रदायना माननीय विद्वान् श्री डे. डा. खड्गीश्वरी सत्य ज्योतिषी द्वारा यथेष्टा सर्वप्रथमं एष गुणवती अनुवाकान् अत्रे प्रकाशित इतया आनंद राय डे. -तात्री]

कुमुदमारघरात्ताहितकुम्भमिवापुनाच्छरकरकर्मन्तरं विभ्रतम् ।

मस्त्रकुंडलमेरिताम्रमंडलमोक्षोत्तितनुवनंभवम् ॥१॥

अक्षे के क्षमहेवना आयाना छेडे दुःखने भूरी शब्दु छे तेवा अक्षुधयता इत्य-
क्षमलना नय धारणु कर्षा छे; मस्तदुत कुंडलीषी यक्षुभरेलां लभयुानी प्रभाषी त्रये लोकेने
श्रीवर्णां कर्षा छे; (१)

अतितुमगतिविद्युत्विद्युत् अक्षविक्रिन्तिविद्युत् ॥२॥

अतिसुंदर (अधुत (इलीना भात्र) कंधिके लयिा इरेला छे; लाक्यटठ नीयला डोडणी
पाडेला (गलोडने आंयुं पाडी डीयुं छे; (२)

मिवाकुनीयुपसिस्वरस्वोभिरिवानेकरेणामी रंजितावत् ॥

मनसुत्तुमिवाकुवदितुममाम्मनुवाफळमरेणमिवाकुदरोक्तमिमातातापुत्तम् ॥३॥

अक्षे के पोतानां वचनाभूतोऽप्री नवीयुप अस्वरतीवाणी अनेक इभाष्योषी नीयलो
डोड रंभायेला छे; नासिद्ध सोनाना टोसथी परेवेलां आंत सुंदर निर्भंग गौतीय्येथी शोकी
रहेता इषुसाथी लावी अने नीयथी थया इरे छे; (३)

कुवितकुमुदमारघरात्सुरोनेव शोभकृतामेमगतिप्रतिभंभवानितोरेवेवेमज्जोइतेन

मिमुवनविकल्पमेगेवातिवलेन

रसहरसिक्कमेलेत्प्रतिभमरेमेवातिवकाममज्जेन

नकानुगेन हरत् रतिपतिवपतनकुठिनंभवम् ॥४॥

डोपी छेडेला क्षमहेवनां आया केवां, अक्षे के क्षानने क्षरक्षे अति थंभाषी डीपी डोय
तेथी थयेलां डोपने क्षरक्षे कंधिके लाड थर्ष भयेलां, अक्षे के त्रये लोड छेपर विजय कर्षो डोय
तेथी व्यस थर्ष भयेलां, आंत अयल, रसाण इभगना प्रमथी लभेला लभरा केवां जेठ
नयनेने लीषी क्षमहेवना धनुषना केपी जेठ लभर जेवा लायक थर्ष वूरी छे; (४)

प्रयत्नं मत्तवज्जितकं मृतनाभिवं कृतयले व ।

तन्मज्जेडने व नुत्तवकल्पवित मिदुमरकम् ॥५॥

પહેલાં ચંદનું તિલક અને એની વચ્ચે ડસ્તીની ટીલી, એની વચ્ચે પણ ચોલીનું ટપકું ધારણ કરેલું છે; (૫)

અતિશયનિરવિચિત્કુરેવૃત્તવદન્તુવં સભ્યઃ ।
દરહુવચિગલિત્તમભરિમલ્લકુચૈરિવ ખમરેઃ ॥૬॥

બરે ઓ સખીઓ; હાસ્યને કરણે પોલાણમાંથી નીકળેલા નિર્મળ પરિશ્વલથી લેલા-
થેલા ભમસઓના જેવા પૂવ વાંકડિયા સુંદર કેશ વદનકમળ પર વ્યસથેલા છે; (૬)

અલ્પોદયયિતકુસુમેવૃત્તવદન્તુવં રાત્રી ।
રાત્રાવીધમિવાલિત્તન્નચૈરાત્તં ઘણે ॥૭॥

આકાશમાં બધાં નક્ષત્રોથી વીંટળાયેલા અંદ્રમાં જેવાં કેશમાં રૂચેલાં દૂલ સાને વદન-
કમળ પર વ્યસથેલાં છે; (૭)

પદ્મરાગપ્રતિભમ્લક્ષ્મિશ્ચરત્તેષામિક્ષ્મોંચરિમામં
ગુંજાપુંજસંગલિત્તર્ણિવદોદૃષ્યયિત્તિવિષ્યયિજ્વાલ-
નુક્કાક્ષતમ્લકરત્તેષીર્ગકુસુમાક્ષ્મણિસવહિત-
નોલમ્લપુચરિત્તિષ્વત્ત્વુક્ષ્મણાક્ષ્મણરોષિમ્લુકુચિવાક્ષ્માત્તેષામમ્ ॥૮॥

હાનની ઉપરનો બાજ પદ્મસમથી વધી બાજ તેવાં અરબાજનાં દૂલોથી ચોથી રહ્યો છે;
મસ્તક પર ચણેલીઓના સમૂહે કરેલાં ચોરથીથી રૂચેલા અનેક પ્રકારના મણિઓની ઉપર
મૂકેલાં મોટાં મોટીઓથી ઝુગટ ચોથી લેકાનો છે; (૮)

વિવિષકુતુપોદયયિતમુખમયંવકલેમાપાશં
વક્ત્રાવીતનેશ્ચિવિષ્વકુન્દપ્રકરમ્ભારિપરિમલ-
હુન્નમ્પુક્રનિષ્વરકુલ્લવનમાન્નમ્ ।
વિમ્ભાસંદર્શિતવલિનચગલત્તં કરકમ્લકમિલ્લવલિત્ત-
શંશીકમ્લરવેષ વિશ્વકિત્તુનિગલત્તમાયિ નિલિલ્લુદ્વલિમિં,
તમાપિત્ત્વમાનવીકૃતાલેનવલિનમં વિષ્વકલ્લોદ્વલિમિમુક્ત-
નિલ્લમુખામોદ્ભમ્લકમ્ભરત્તોંવત્તપુવ્વુટિમાનં
રલિપલિત્ત્વસ્તાકામિવ મનેત્તમ્ભવતિદ્વમ્લપ્રમિવ
તાર્લીયપુસ્પૈલિદ્વલ્લત્ત્વસ્વમિવ ત્રિલિલ્લનિત્તં કિન્નોમનઃકમાત્તર્ણ-
વંચ્ચન્નમ્લોભૂત્તમ્ભવિમિવ ક્ષ્મ્લોમાત્તર્ણમિવ
મૂર્તિમલિત્તિમુખનલુગમામિવ ક્ષિત્તર્ણમલ્લકનુક્કાક્ષ્મણિવ
પ્રતિલિલ્લિત્તવિલિલ્લકુન્દુકુસુમેવૃત્તિલ્લમ્લુકિત્તમિવ
અલિલ્લપુષ્પપુંજમિવાવસ્ય ।

તતઃ ક્ષેપાતિભરમ્લતા સરે ક્ષિવમ્પામૃતામ્લિક્ષ્મણાતર્ણમેયુ
વિરંનિલ્લમ્લનવનવીનકુમ્લવ્વડ્દમાલમ્
તત્તસ્ત્તપ્રાપ્તિમાશંતમામાયા તિદ્વા વિશ્વકિલ્લવમ્ ।
તઃ પ્રતિષ્ઠમ્લવ્વડ્દવરમેષ્વેષ્વપુલ્લકલ્લોદ્વલિમિવં મ્લલમ્-
‘હા હા નાય ધારણ્ણ હા હા ગોપીક્ષ્મણ-
હા હા મુંદાવનમ્લપ્પ હા હા લાન્દાન્દાન્લર્ણ’ ॥૯॥

દાખા દેશનો સમૂહ અનેક પ્રકારનાં ફૂલોથી વૃક્ષો હોવાથી સુંદર લાગે છે; પવને લાવી આવેલાં પોતાનાં અનેકવિધ ફૂલોના સમૂહને લઈ પ્રસરી રહેલા પરિભ્રમમાં લોભાયેલા ભ્રમરાઓના સમૂહ હલી ઊડેલી વનમાલા ધારણ કરી છે; જમણા ચરણનું તણું ત્રલંગ શરીરસુદ્રાથી બતાવવામાં આવ્યું છે; કરકમલથી વગાડેલી લલિત ખંચીના કલ સ્વસ્થી સમગ્ર વૃંદાવનમાં સુનિઓના સમૂહોની સમાધિને સ્થાને દોડધામ કરાવી મૂકી છે. બધાં જ પક્ષીઓને સમાધિમાં હોય તે પ્રમાણે મનના સંયમવાળાં કરી નાખ્યાં છે; તથા લોકને મિત્રમાં હોય તેમ આપણના રૂપમાં કરી લીધા છે; પોતાના મુખના મુગધથી ભ્રમતા ભ્રમરાઓના ગણગણાટ રૂપી ગાન સંભળાયા કરે છે; આવા, કામદેવની વિજયપતાકા જેવા, કામદેવની સિદ્ધિના મુગ જેવા, બધી લલનાઓનાં મનને આકર્ષિત કરનારા મંત્રનું જ્ઞાન ધરાવનારા ગારૂડીના પૃથ્વીને શોભા આપનારા મણિ જેવા, બધાં કે મજનું પરમ ભાગ્ય હોય તેવા, શરીર ધારણ કરી તથા લોકના અભેડ સૌંદર્યરૂપ, તથા લોકનાં નયનોમાંથી જન્મેલી સફળતા જેવા, પ્રતિબંધરૂપ ધઈ રહ્યાં હોય તેવાં અનેક પ્રકારની નિકુળોનાં ફૂલોથી બધાં કે જેમને બધાં દેવો સંમાન આપી રહ્યા છે તેવા, બધાં જ પુષ્પોના દગલા જેવા (પ્રભુ)નાં મેં દર્શન કર્યાં. તેથી કરીને પ્રેમથી સભર બનેલા મનની સાથે ઈદ્રિયોરૂપી અમૃતસાગરવરૂપ (પ્રભુ)નાં પ્રત્યેક તરંગમાં લાંબા સમય સુધી મારાં નેત્રરૂપી મસ્તક ટુલસી મારી રહ્યાં. એ સમયે એમને પામવાની હું આશા કરી વહી હતી તેથી મારી નદ્રા જિહ્વી ઊર્ધ, તેથી કાણે કાણે મૂળ મૂળ વધી ગયેલા શામંથને લીધી હું આ પ્રમાણે વલાપ કરવા લાગી : 'હે સ્વામી, હે શરણે આવનારને સ્વીકાર કરનારા, અરે હો ગોપીજનોના અધાર, હે વૃંદાવનની ભૂમિના અલંકાર, આનંદીઓને હે આનંદ વધારનારા, (૬)

વંનમતરવવરિવલા કાન્નેન વિવિત્તરસ્વેદતા : ।

અબળેજેડસ્તિતંગદીમ્ભુમાસ્વદપાદપણેત ॥૧૦॥

સમગ્ર લોકના અભેડ સૌંદર્યના સ્થાનરૂપ હે ચરણકમલવાળા (પ્રભુ). આપના મુખ અંદરનું દર્શન કરવાના વિષયમાં વિધિએ આટલો સમય છેતરપોંડી કરી. (૧૦)

અહહ પ્રિયસનેન તિન્ના કમ્પદ્મં ક્ષમં જીવંતે ।

વલ્કવીનુંદવલ્લભમ્ય વિલેપતઃ ॥૧૧॥

બધાં ગોપીજનોના વહાલાના વિષેપદો, પ્રિયનો સમાગમ થયા વિના લલુમાત્ર પણ હું જીવન કેવી રીતે ધારણ કરી શકું ? (૧૧)

પ્રથમં મવતોડદર્શનોદેનેતિ દુઃખસ્તાનમ્ ।

અણુના મંવેને લ્પિને દુઃખં પાત્તં સ્વદગ્રાવયા ॥૧૨॥

પ્રથમ આપનું દર્શન ન થવાને કારણે થયેલા ઉદ્વેગને લઈ દુઃખો પર દુઃખો આવી લાગ્યાં; અત્યારે આપનાં દર્શન તો થયાં, પણ આપની પ્રાપ્તિ મને ન થઈ તેથી દુઃખ આવી પડ્યું. (૧૨)

મક્ષીતિનિ કિમિત્યર્થં પ્રસંગીમ્કરંત્યં પ્રિય મે મનોસ્વડતિ : ।

ન હિ સંમવતિ પ્રવાદપીઠ પ્રજ્ઞોગીક્ષ્ણજીવનંધિવષ ॥૧૩॥

હે પ્રિય, થઈ રહ્યો છે એમ મારો મનોસ્થ હતો છતાં પણ આ પ્રસંગ કેમ મનના પારથો ? ત્રજનાં ગોપીજનોને જીવન આપનારા ચરણકમલ ધરાવનારા હે સ્વામી, ત્રમથી પણ આવું સંભવે નહિ. (૧૩)

सर्वं मधुरिमासीम तावर्कं गोकुलेधर ।

यदि त्वहिरहो न स्पष्टदक्षमः स्वाभवेक्षण्ये ॥१४॥

अधुं माधुर्यं नी हृदं क्यां पूरी थाय छे तेवुं छे. हे जे कुलना स्वामी, जे आपने विरह न थाय तो पोतानां आश्रितोने दर्शन न करायी शकै. (१४)

एवमुक्त्वा हस्तं विलम्बीमूर्च्छितः समासम् ।

ततश्चिरेण भूतिपयमतप्रियवशीतिनादेर्म वैरिव भिगतमूर्च्छाहममम् ।

तंता मामिर्ग्यं दुःखितां सती तच्छपयम् ।

ततो मरुः लदुःखिता नामहं शेषान् च कोऽपि लभितानंतं न दायुस्तं गच्छति ।

करोति तुवमासीमां मन्मथान्मथिवे हि सः ॥१५॥

जेभ अनेक प्रकारे मोटा खास बनणी विलाप करती करती हुं भूछां पात्री गर्ध,
त्यार पछी लांजा सभये प्रियणी अंसीना नाड सांभणपाभां आवतां म शेषी भूछां नाश पात्रे
ते रीते मारी भूछां नाश पात्री. जे सभये दुःखी थयेली भने आ संपीजे जेठ, जेठले पूण
दुःखी थयेली हुं जेने कहेवा लागी: 'आभदेये जेभने जेदी नाभेला छे भने आनां दी न'दशय
पगेरेना जोषामां लाड पासेला छे तेवा जे अनेऽ सो'दयं नी हृदं वाणी रखा छे. (१५)

ते न एषामि कः इषाममंरं इषितसि ।

मुरलीकल्याणदेव महाव्यंमयांमान् ॥१६॥

अली संपी, मुरलीना भीडा नाथी आ वजतने मोह पभाडता जे श्यामसु'हरनां
भने दर्शन कथावतारा मारी नजरभां कौछ आबते; नथी. (१६)

कापि सर्वं मम संगतिं चरिचरि किमु प्रजापिपाशा ।

या नैत्यंतमुरलीतरलं यतः समादृष्टम् ॥१७॥

न'दशयना पुत्रनी मुरलीजे हलाची नाभेला चित्तनु' सभाधान करे लेवी मजना
स्वामी श्रीकृष्णने प्रणुत्रप मलुनारी मारी कौछ संपी छे अरी ? (१७)

गताऽऽस्मयाहमये क्विद्वन्वानरं तत्र तमासीत्यम् ।

विभंगमस्मस्कुलधमंभेयंमं चतुःपादपनं स्वपदम् ॥१८॥

अरे, आजे हुं कालिंदीना तट पर गर्ध ज्यां तमासवृक्षना जेवा श्याम, शरीरने
त्रिलंग करी जेलेला, अमारा कुत्रधर्भनी धीरजने लागी नाभनारा चतु'पति' (मो'पाद)नां मे
दर्शन कर्या. (१८)

किं कुर्मः क्व यामः क्व निग्रमः किंमदयलोकः ।

इति चित्तसंताना जुदेः परंगतं गेष्कः ॥१९॥

'अमे शु' करिये ? क्यां जइये ? क्यां जेपी रहिये ? अमने आ शु' थकुं ?' जेभ
सतत चित्त करनारी जोषीजे लुडिनी पखे पार याली गर्ध (जेभान थर्ध पछी). (१९)

॥ इति श्री कृष्णविविक्तं स्वप्नदर्शनं समाप्तम् ॥

હોરીખેલમાં હરિરિહ વ્રજયુવલિશક્તિસંગે આદિ
પદ-રચનાઓ ઉપલબ્ધ થાય છે. તેમજ
સાહ્ય સંલોગ, સંખ્યા અને રાચનસમયે
આરતીની પણ સુંદર આર્યાઈકમાં રચના
છે, તે શ્રી ગોસ્વામી ખાલકોએ કંઈસ્થ
છે, તે તે આરતી વખતે ગોલીને આરતી
એવી સેવાપ્રણાલી છે.

મંગલા-આરતીની આર્યા

મંગલા આરતીની આર્યામાં ગણગરમાં
તરી જેમ નંદાકથનાં પ્રાકટચના સમયથી
પ્રધુર શસલીલા પર્વ તરી સર્વ લીલાઓનું
ન કરવામાં આવેલ છે.

મંગલમંગલં વ્રજનુવિમંગલમ્ ।
મજામુખિમાં પ્રણુના પ્રાકટચથી સર્વ ત્ર નગર,
મ ગોચાલા, આકર્શાઈ સ્થાનોમાં આનંદ
વરી ગયો, એના હર્ષોલ્લાસમુચક ત્રણ વખત
ગણ શબ્દનું ઉચ્ચારણ કરવામાં આવ્યું છે.

નૈમલમિહ મી મન્દગંગાદાનામનુર્ભવતમેલદ્વિંતોલંગ-
લેતપાલિતકપમ્ ॥૧॥

આ મજામાં શ્રીનંદનંદન-શ્રીવશેષાદાનંદન-
કૃષ્ણનું નામકીર્તન મંગલરૂપ છે. યશોદાભુવિ
માં જેમનું વાત્સલ્યપૂર્વક લાલનપાલન થઈ
લ છે, તે યશોદોત્સંગલાલિતરૂપ મંગલરૂપ
છે. (૧)

આમાં પ્રાકટચ અને નંદમહોત્સવના આવનું
નિરૂપણ છે.

શ્રીશ્રીકૃષ્ણ ક્ષિતિ મુલિસારં નામ સ્વાતંત્ર્યાચવ-
ન્યપદ્ધમિતિ મંગલપદ્ધમ્ ।

સહજ શોભાયુક્ત 'શ્રીકૃષ્ણ' નામ સર્વ વેદના
વાચરૂપ છે. આ નામ નિજમહાજનોના વિરહ-
નુષ્ણ સમન કરનારું મંગલ શબ્દરૂપ છે.

આમાં ગર્જાચાવં દ્વારા અંતઃકરણને શુદ્ધ
કરનાર નામકરણ લીલાનો ભાવ વર્ણવેલ છે.

વ્રજનુવરોચયસ્વરુમીત્રું દમ્ભગીવનનિલમખાવા (વ)
મંગલસિવુચર્યા (જુ) ॥૨॥

મજાગોપીએ, ગોપબાલકો, ગાયો, પશુ-
પક્ષીએના અનુપમ ભાવસ્વરૂપ આનંદસાગરના
સમૂહસ્વરૂપ પ્રભુ શ્રીકૃષ્ણ સર્વંદ મંગલરૂપ છે.

(૨) આમાં નંદાંગણમાં રિંગણલીલા આદિ ભાવો
નિહિત છે.

મંગલમીગલિમતયુતવીક્રમમાવજનુલ્લનાવાપુટ્યાલુકા-
કરવલ્લમ્ ।

મંદ હાસ્યસહિત અવલોકન (કટાક્ષપાત)
મંગલરૂપ છે. ભાવભાઈ સમયે સુંદર નાસિકમાં
ધર:યેલ નકોસર-ભુલાપના મજાગોપીનું ચલન
મંગલરૂપ છે.

આમાં ગોપીજનો સાથે પરસ્પર સંભાવણ,
માખણચોરી આદિ લીલાઓનું ભાવનિરૂદરૂપે
વર્ણન છે.

કોમલકાવંતંગુલિરભાગવેનુનિનાદવિમોહિત્વાંદાન-
નુરિચ્છા(તમ) ॥૨॥

સુકોમલ ચંચલ અંગુલિઓની સાથે અધર
ઉપર ધરેલી ખંચીના શબ્દની સ્વરલહરીથી
વિમોહિત કરી સ્વલીલામાં પ્રવેશાધિગર આખ્યો
છે. વૃંદાવનની ભૂમિમાં સ્થિત વૃલ, ભતા, ગાય,
ગોપી, જડ-ચૈતન સર્વને તે સર્વંદ મંગલરૂપ
છે. (૩)

આમાં વેણુગીતના આવનું સ્પષ્ટ વર્ણન છે.

મંગલમખિલં ગોપીશિનુવિગેવગતિવિષ્મમેહિત-
ચતસ્થિતગામ્ ।

ગોપીજનવલ્લભની સમસ્ત લીલા, હાવ,
ભાવ, ગતિ, નિરીક્ષણ, શસમાન સર્વ મંગલરૂપ
છે.

આ તુકમાં શસલીલાનું વર્ણન છે.

સ્વં જ્ય લલતં મોવર્કનસ ગાલ્લ નિકગલાન ॥૪॥

હું ગોવર્ધનધર ! આપની સહા જ્ય હો.
આપ કૃપા કરી નિજમહાજનોનું પાલન
કરી. (૪)

આ તુકમાં દેવેક્ષતિ યદ્વિચલ્લચ્ચા-ગ્રીપામ્હસ્ત્રો
ગવામ્ આ ગોવર્ધનલીલાયુ' વર્ણન છે.

આ મંગલા આરતીની આર્યામાં આવી રીતે
સાસદીલાપર્થ'તની ફલરૂપ લીલાઓના દિવ્ય
ભાવાયુ' નિરૂપણ છે. તે હૃદયગમ કરતાં
મંગલા આરતી કરવાની પ્રણાલી છે.

૨. રાજભોગ-આરતીની આર્યા

નજરાઅવિરાજિવોયવરે, વરણીવમનોહરરૂપવરે ।
ધરણીરમણીરમણીકવરે, પરમાર્તિહરસ્મિતવિષ્ણુનકે ॥૧॥

મકરાકૃતકુળજ્યોમિમુલે, મુવરીકૃતરૂપુદ્ધરગતી ।
ગતિસંગતમૂલતાપહરે, હરલાક્રમિમોહનગનવરે ॥૨॥

પરમપ્રિયગોવલપૂહદરે, કામ્યા દિનતાપહરે મુદ્દગમ્ ।
હૃદયસ્વેત્તગોકુલવાલિકને, બનહરવિહારપરે સદ્ગમ્ ॥૩॥

તતવેણુનિનાદધિનોગરે, પરવિજયહરસ્મિતમાત્રકવે ।
કામ્યીયગુણકરપાદ મુગે, યુગલે યુગલે મુદ્દગાં મુદ્દગાં ॥૪॥

રાજભોગ આરતી કરતાં શ્રીમત્પ્રભુચરણ
વિકૃલનાથજી 'મારો પ્રેમ મજ્જસજ્જ મુત-શ્રીનંદ-
કુમાર વિષે થાઓ' એવી અભિલાષા કરે છે.
જ્જરાક્ષુતે આ પદ સપ્તમ્યન્ત પદ વિશેષ્ય છે.
ખીબ' બધાં સપ્તમ્યન્ત પદો મજ્જસજ્જમુતનાં
વિશેષણો છે.

ગાયોનાં ધણુ સખીને અદીર (આધરો) જે
સ્થાન (નેસડા)માં રહેતા હોય તેને 'ધોષ'
કહેવામાં આવે છે. યોકુલ ગામમાં બિરાજી
રહેલા શ્રીમજ્જસજ્જ, ભક્ત વિકૃલથી વર્ણવાય
તેણું મનને હરણુ કરનાર સુંદર સ્વરૂપ, મહત્કૃત
કુંડલથી મુશોભિત મુખ જેમનું છે એવા,
ચરણારવિંદમાં શબ્દ કરી રહેલા નૃપુન્દ્રી સુંદર
ગતિવાળા, ગતિ-સંગતિથી ભુમિનો તાપ હર-
નાર, સંગીતજ્ઞ શિવ-ઇન્દ્રાદિ દેવોને વિભોદિન
કરનાર; વેણુગાનમાં તત્પર, અતિપ્રિય ગોપરી-
ઓના હૃદયમાં બિરાજમાન અથવા એખીજનો
જેમના હૃદયમાં બિરાજે છે એવા, કૃપા કરીને
ભક્તજનોના દિવસના તાપને હરનાર, યોકુલ-
નિવાસી મજ્જવાસીઓના હૃદયમાં બિરાજનાર,

નિરંતર ભક્તજનોના હૃદયહૃલ્લ:હક વિહાર
કરવામાં તત્પર, વેણુવાદનરૂપી ખેલમાં તત્પર,
મંદહાસ્યયુક્ત મનોહર વચનોથી ખીબના
ચિત્તને હરનાર, વર્ણનીવ સકલ સુખનિધાન
મુગલ ચરણે, મુનયના મજ્જીમંતિનીઓ સાથે
રમણ કરતા યુગલ સ્વરૂપે વિસજ્જમાન એવા
મજ્જસજ્જમુત-નંદકુમાર-શ્રીકૃષ્ણમાં મારી (શ્રી-
વિકૃલનાથજી)ની રતિ થાઓ.

૩. સંધ્યા આરતીની આર્યા

આ આર્યા પંચમમુત શ્રીરઘુનાથજી કૃત
હોવાની પ્રતીતિ થાય છે. આમાં રતિસ્તુ તદા
ક્ષમતાન્વે-અવંદ્ય વલ્લભમુતમાં (શ્રીવિકૃલેશ-
પ્રભુચરણુ શ્રીયુસાંઈજીમાં) મારી રતિ (મારો
પ્રેમ) થાઓ.' આ મુવપદમાં શ્રીયુસાંઈજીને
અને શ્રીપ્રભુને તદ્દપ ભાવથી વર્ણન કરીને
પંચમકુમાર શ્રીરઘુનાથજીએ આ આર્યા બનાવી
છે. જેમ ડીગોપાલદાસજીએ નવાખ્યાનમાં
વર્ણન કરેલ છે; ક્રીતસ્વામી તથા અનન્ય
ભગવદીયોએ 'વિકૃલેશ ચરણુકમલ, પાવન
રોડોકમકરણુ' જે વમુદેવ ક્રમે પૂરન તપ, સો
ફલ ફલિત ધીવલ્લભદેવ' 'આગે' ઝાય પાછે'
ગાથ'માં 'ક્રીતસ્વામી ગિરિધારી, વિકૃલેશ વયુ
ધારી' આદિ અનેક પદોમાં વર્ણન કરેલ છે, તેમ
'વલ્લભનનય' આ શબ્દ સ્પષ્ટ હોવાથી આ
આર્યા શ્રી રઘુનાથજી નિર્મિત હોવાનું પ્રાચીન
આચાર્યબાલકાં અને વિદ્વાનો માને છે.

રતિસ્તુ તદા ક્ષમતાન્વે ।
હરિઅભિમુખાદભિષ્ણુદિકરે કરંવર્ણનકૃપ્યકામારસે ।
રલિકાગમ્યાકામૃતોકિવરે મરમાદલીલતામ્હરે ॥૧॥
પદચંદિત્યાકન્યાપાકને અનીચ્છરાગમતાપહરે ।
હરનીતવિદારણ્યમકંથે કામ્યીયગુણકરદાસવરે ॥૨॥
ચરણાસ્માનહરાગમને રમણીયમદોર્ધાકાસરસે ।
રત્વપદ્મચંચલદોર્ધામિમુલે મુનરીકૃતવેણુનિનાદરસે ॥૩॥
રતિનાર્થવિમોહનવેવરે ધરણીકાધરણામારમરે ।
મરતાવમથિષ્ણુતલ્લસ્યકરે કરકૃપ્ત્રગીરીકૃપદાચ્ચરસે ॥૪॥
રતિસ્તુ તદા ક્ષમતાન્વે ॥

પ્રભુભક્તિરૂપી અમૃતસિંધુની વૃદ્ધિ કરનાર, સમય કૃષ્ણકથા વર્ણન કરનાર, આજમયુક્ત વચનામૃતમાં તત્પર, ભક્તો દ્વારા અત્યંત આદરણીય ચરણકમલ જેમનાં છે (એવા), (૧)

પદવંદનમાત્રથી પાપીએને ખવિત્ર કરનાર, જન્મ-મરણનો તાપ હરનાર, પાપાંડને નષ્ટ કરનાર જેમની નામકથા છે, વર્ણનીય મુલ્યોની આણુ ઉત્તમ ભગવદીય જેમના છે (એવા), (૨)

મઠ-આનને હરણ કરનાર જેમનું આગમન છે, મુઠર શસરસ્રાગર સ્વરૂપ, રત્નભરેલાં નેત્રોથી મુશોભિત મુખવાળા, મૃતિત વેલુનાંદમાં તત્પર (એવા), (૩)

કામદેવને શોહક વેવ ધરનાર, ગોવર્ધન-ધારણીઆરથી મુક્ત, ભરતનાટ્ય-લાસ્યનૃત્ય કરવાવાળા, ગિરિધારી શ્રીકૃષ્ણના ચરણકમલમાં રત એવા શ્રી વલ્લભતંત્રય (શ્રી ગુણાંકલ)માં આદે સર્વદા પ્રેમ ધામ્યા. (૪)

૪. શયન-આરતીની આર્થા

શોવાપિપતિ કમલાપિપતિ કન્દે તમહં મધુરાષીરામ્ ।
 શારણાગતમીલિ મિત્રભેરં પરપ્રભોગાનિકરામુનિષ્મિ ।
 મિથિલેવિતપાદરોચ્ચુગં યુગપર્મનેચતિતકાલકરમ્ ॥૨॥
 કરોશોક્ષિપિતં પ્રમદીપકુચં કુચકુંકુમલિવત્પરોહરકમ્ ।
 હલયતિપતંગાકુલંચાલનનં કવલંચેતપુષ્પચરેકમ્ ॥૨॥
 ફલદાનપચતિતમધેનુજં સુવદનપદ્મહીતકુવામ્મિષ્મિ ।
 મથિદોમિતહસ્તપતાકિર્ત્તં વરોગચ્છૂવસંકલિતમ્ ॥૩॥
 ચંચિતપ્રમદામુગતવલકરમ્ કરવચ્છુવાહિતવેણુવરમ્ ।
 વરમકથિારસ્થિતવપદ્મકંદં કરમર્હિતવાદસ્પુવારેણુમ્ ॥૪॥
 રિપુમ્પનુજં ગમદર્ગહરં હરણુચિત્તમ્લોચવદમ્ ।
 વચ્છુવચ્છુવાહિતવલકરં પદવચ્છનલસ્થિતમકિરતમ્ ॥૫॥
 સ્લપુરિતોપવચ્છુવારગં શારણાગતવોપકલમવદમ્ ।
 મયદીપશિરોહરસ્લહગ્વયં ધરણીકૃતપુષ્પચરેકમ્ ॥૬॥
 ફલોરુચિમર્દિતપુષ્પલલ્યં ચરનકિરવાદરોચ્છરમ્ ।
 વરર્હિશિર્ષાદકપુકાલં કવચાગ્નિવેષિતપુષ્પચમ્ ॥૭॥
 શોવાપિપતિ કમલાપિપતિ કન્દે તમહં મધુરાષીરામ્ ॥

મંજલા આરતીની આર્થામાં 'હિ ગોવર્ધનધર ! સર્વમંજલરૂપ ! આપનો, જય હો ! નિશ્ચ દાસો-ની રક્ષા કરો.'-એમ જયઘોષપૂર્વક વિનંતી છે.

સંજ્ઞોગ અને સંઘ્યા આરતીની આર્થામાં અપતમ્યન્ત પદોથી ભગવદુપવિષયિણી સ્તીની વાચના કરેલ છે.

આ શયન આરતીની આર્થામાં નિરપેક્ષ પ્રભુના વિષે જીવ હીનભાવથી નમન કરવા સિવાય કંઈ કરવા સમર્થ નથી. પ્રભુ નિરપેક્ષ હોવા છતાં સદેવ્ય નર્ત-વિનંતીથી ભક્તવત્સલ પ્રભુ ભક્તચાપેક્ષ થઈ એની સેવા અંગીકાર કરે છે. એ સિદ્ધાંતદલ કરવા માટે શ્રીગુણાંકલ કવે તમહં મધુરાષીરામ્ આર્થામાં વર્ણિત દ્વિતીયાન્તક વીરોપલોથી વિખૂંપિત મધુસૂધીશને 'કું' નમન કરું' છું'- એમ વર્ણન કરે છે.

આપ શરણાગતના ભયનિવારણમાં તત્પર છે. આસુરભાવરૂપી જ્ઞાનાંધકારને નષ્ટ કરવામાં ચંદ્ર સ્વરૂપ છો, જેમનાં મુગલ ચરણ નિધિરૂપથી સેવવામાં આવે છે, અથવા અદ્ભુતિદિ નવનિધિથી સેવિત જેમનાં ચરણકમલ છે, હલિજુગળ ધર્મને નિવૃત્ત કરનાર, (૧)

સ્વનપથી જલસીમતીનીએના કુચને ચિહ્નિત કરનાર, કુચકુંકુમલડિત વચસ્વી હલય-વાળા, ગેકુલવાસી જેમના હલયમાં વસેલા છે. ભક્તજનોના હેત્રા ચણેલા પુષ્પસમૂહના ફલસ્વરૂપ, (૨)

ફલદાન આપવામાં સમર્થ શુભવાળા, મણિરૂપ કુચવૃચુકને સચક્રત શુભથી ચૂકણ કરવાવાળા, મણિશોભિત હસ્તથી શ્રીગિરિશજને ધારણ કરનાર, ગોપીજનોના સમૂહથી મુક્ત, (૩)

અતિ સૌભાગ્યમયુક્ત જલજાતો સાથે સસ કરનાર, અને કરકમલમાં વેલુ ધારણ કરવા-વાળા, શેષ ભક્તોના મસ્તક ઉપર હસ્તકમલ સ્થાપિત કરનાર, શાહવધૂષના શત્રુએને હસ્તથી મર્દન કરનાર, (૪)

જોવડાં નવવર્તની આસપાસ પરિભ્રમણ કરતાં એવિદ્યુટ ઊપર એમને શીંયાણાની ગાંબી થઈ. શીંયાણાની આસપાસી પ્રવૃત્તિઓએ એમને કરણે લઈ સેવક કર્યાં. પછી તે એમો વળ્યાં વિચર્યા કરતા અને મુગધસ્વરૂપ સંગથી કાબરચના કરી, એવું માન અને ધ્યાન કરતા.

શ્રીમદ્ કુલમાં મેરવાલા મંદિરના બગીચામાં (સ્વસ્થરેલીમાં) સ્વસ્થાનની સ્મૃતિરૂપ ખતરી આવેલી છે.

એમણે 'સુખન સ્વસ્થાન' 'પ્રેમવાટિકા' અને 'સ્કુટ પદો'ની સુમધુર રચના કરેલી છે. 'પ્રેમવાટિકા'ની રચના એમણે સં. ૧૯૭૧માં કરેલી છે, તે એમના વિદ્યુ(૧) રસ(૬) સામર(૭) ઇદુ(૧) સુખ' એ દોહા ઉપરથી બણી રાખ્ય છે.

એમના બે પ્રાચીન ચિત્રો ઉપલબ્ધ થાય છે: (૧) ભારત કલાલવન-કારીમાં સંક્રમિત 'કવીશ્વર-સ્વસ્થાન'નું ચિત્ર છે. આ ચિત્રમાં મથાલે નામરી ચિપિમાં 'કવેશ્વર સ્વસ્થાન' અને તેની નીચે 'કુટુંબ' ચિપિમાં 'અમલ મુસવ્વર સિવદાસ તસ્વીર મિશ્ર સ્વસ્થાન કવીશ્વર માની સાથે દિદી' - એમ બે વાર લખેલું છે. (૨) સાંપ્રદાયિક પુસ્તક પ્રકાશક એ. વા. શી. બલુભાઈ હમનલાલ દેસાઈએ શ્રીસ્વસ્થાનના વિષે પ્રકટ કરેલ પુસ્તકમાં શીંયાણા સાથે શ્રીસ્વસ્થાનનો આવડવાનો ફોટો-પ્લોક બધો છે, તે ખુલ્લું સુંદર છે.

આથી 'વેપાનર' માસિકના નૂતન સંસ્કરણના 'પ્રવેશક'માં શ્રીસ્વસ્થાનની સસ્વ કાવ્યમુતિ 'પ્રેમવાટિકા'નો મૂળ સાથે મુબતલાતીમાં આવડાઈ પ્રકાશિત કરતાં અત્યંત આનંદ થાય છે. મૂળ વાચના માટે ફિદી પુસ્તક પ્રકાશકને હાર્દિક આભાર માનું છું.

કવેરી બગર,

પાશ્વર, તા. ૨૪-૧-૭૮

- પ્રેમકાલ મો. મેવચા 'લક્ષ્મિપ્રિય'

મહાનુભાવ શ્રીસ્વસ્થાનના કૃત

પ્રેમવાટિકા

(મંજલાવરણ)

મોહન છબિ 'સ્વસ્થાન' છબિ, અબ દમ અમને નાહિ

એણે આવત ધનુવ સે, છૂટે સર સે નાહિ. ૧

બગવાન મીઠુંચુવડનો મનમોહક છબિનાં છાંન થતાં, જેમ જેએલા ધનુવમાંથી: છૂટેકું બાણ/પાણુ આવતું નથી, તેમ હવે આ નેત્રો પારાં રૂલાં નથી - બગવાન મીઠુંચુવડ સ્વસ્થાનમાં તસ્વીન બની ગયાં છે. (૧)

બંક બિલોકનિ હૃસનિ મુરિ, મધુર ઝૈન સ્વ સાનિ.

મિલે રસિક સ્વસ્થાન દોહ, હરખિ હિયે 'સ્વસ્થાન'. ૨

મુ'દર હાસ્થામૃત ભરેલી વાંકી દક્ષિણી અવલોકન કરતા અને સ્વસ્થાનેક મધુર વચનામૃત વરસાવતા સ્વસ્થાન શ્રીમુખ, મને રસિકને મળવાથી મારું હલવ હપાંમધાન-મર્ષ રહ્યું છે. (૨)

દેખ્યો રૂમ અચર, મોહન સુદંડસ્થામ કો,
વહ પ્રજ્વલજ્વલુઆર, હિય વિષ નૈનનિ મેં બસ્થો. ૩

સ્થામસુદંડના મનમોહન અને અચર રૂમનું દર્શન થતાં, એ પ્રજ્વલજ્વલુઆરનો માલ
હસ્તમાં, પ્રાણમાં અને નેત્રોમાં નિવાસ થયો. (૩)

યા છબિ પૈ 'રસખાનિ' અબ, વારો કોટિ મનોબ,
બાકી ઉપમા કવિન નહિં, પાઈ, સ્થે સુ ખોજ. ૪

એની સુંદરતાની ઉપમા માટે સારી પેઠે સૌંદર્ય કરવા બતાવે છે અને કવિએને એમ સખ્તો
મળતા નથી; એવા પ્રજ્વલજ્વલુઆરની આ છબિ ઉપર કયોયે કામચંદને નોંખવર કરી નાખ્યું. (૪)

સવા ફૂલી ફૂલી ઓર હરીબરી

પ્રેમવાટિકા

(ટોહા)

પ્રેમ - અચનિ શ્રી સપિક્ષ, પ્રેમ-બસ્ત્ર નૈદનં,
'પ્રેમવાટિકા' કે ટોહા, માલી-માલિન દંદ. ૧

પ્રીયપિક્ષા પ્રેમના ધામરૂપ છે અને શીનંદરાજકુમાર - શીખુલકંદ પ્રેમખાનું-સ્થામવજ્ય અને
પ્રેમનું વરણ કરનાર છે. એ બંને 'પ્રેમવાટિકા'ને હરીબરી યખનાર માલી-માલખનું પુત્ર છે. (૧)

પ્રેમ-પ્રેમ સબ કોઉ કહત, પ્રેમ ન બનત કોય,
એ જન બને પ્રેમ તો, મૈ જનત ક્યોં શૈષ ? ૨

પ્રેમ-પ્રેમ તો અધાંય કહે છે; પરંતુ વાસ્તવિક રીતે પ્રેમને કોઈ અન્યનું જ નથી. એ
મનુષ્ય પ્રેમને અલગતા કોય તો આખું જનત કેમ રહી શકે છે ? (૨)

પ્રેમ અમમ અનુમમ અમિત, સામર-સસ્તિ બખાન,
એ આવત એહિ હિમ, બહુરિ, બત નહિં 'રસખાન.' ૩

સામરની જેમ સરસ પ્રસંસિત થયેલ પ્રેમ અમમ કોવાથી અલગી થકાનો નથી; અનુમમ
કોવાથી તેને કોઈની ઉપમા આપી થકાતી નથી; અને અમિત-અમયાં કોવાથી માપી થકાતો નથી.
પરંતુ એમાં એટલો અધાર છે કે, જે કોઈ એની ધરે આરે છે, તે હરી વાર પાકું બનું નથી. (૩)

પ્રેમ - બારુનિ છાનકૈ, બરુન કયે જલધીસ,
પ્રેમહિં તેં વિષ પાન કરિ, પુને બત ગિરીસ. ૪

પ્રેમ-મદિરા અલ્હીને જ વરુણ, જલના અમિષાતા-અનદેવતા થયા. તેમજ પ્રેમવડે વિષ-
પાન કરવાથી જ ગિરીસ-સંકર પૂળવ છે. (૪)

પ્રેમ રૂમ દર્શન અહો, સ્થૈ અજુબો ખેહ,
યા મેં અમનો રૂપ કહુ, છબિ પરિ હૈ અનમેલ મ

અહો ! પ્રેમ રૂપી દર્શણ કાંઈ વિચિત્ર જ ખેલ રચે છે કે, જેનાં પોતાનું રૂપ કાંઈ મેળ
વિનાનું દેખાય છે. (૫)

કમલ તંતુ સેં છીન અરુ, કદિન ખડમ કી ધાર,
અતિ સૂષો ટેહો બહુરિ, પ્રેમ-મય અનિવાર. ૬

કમળાંતું કરતાં પણ ક્રમણ અને અજ્ઞાતી ધાર કરતાં પણ કલ્પ-તેજ એવો પ્રેમ-પંથ
અતિ સીધો હોવા છતાં ધણો જ વચ્ચે અને અનિવાર્ય છે. (૧)

લોક-વેદ-મરજદ સળ, લાજ કાજ સદેહ,
દેત ખલાયે પ્રેમ કરિ, વિધિ-નિષેધ કો નેહ ? ૭

ભોલ-નેહની મર્યાદા, કલ્પ, કાવ્ય અને સદેહ-એ બધું પ્રેમ માટે વહેતું મૂળી દેવાય છે.
સ્નેહમાં વિધિ શું અને નિષેધ શું ? (૭)

કુબલું ન ભવ પથ જામ-તિમિર, રહે સદા સુખજાંદ,
દિન દિન વાકલ હી રહે, હોત કુબલું નહિં મંદ. ૮

જો પ્રેમ-પંથમાં ક્યારેય અજ્ઞાન રૂપી અંધાર હોતો નથી; પરંતુ કોઈ ક્યાનો સુખરૂપી
મંદ ભાં સદા પ્રકાશી રહે છે. દિવસે દિવસે તેમાં વધારો થતો રહે છે. પણ ક્યારેય ધીમે
ખતો નથી. (૮)

બસે વૃથા કરિ પચિ મરે, જ્ઞાન-મરૂર વદાય,
બિના પ્રેમ કીકો સભે, કોટિન કિયે ઉપાય. ૯

વિચ્છા જ્ઞાન તરે અભિમાન વધારી ભયને કારી ભવ ? પરંતુ કરોડો ઉપાય કરવા છતાં
પ્રેમ વિના 'બધું' નીરસ છે. (૯)

શ્રુતિ પુરાન આત્મ સ્મૃતિકિ, પ્રેમ અબદિં કો સાર,

પ્રેમ બિના નહિં ઉપજ દિષ, પ્રેમ-બીજ ક્યુવાસ. ૧૦

શ્રુતિ, પુરાણ, શાસ્ત્ર, સ્મૃતિ વગેરે બધાંને સ્પર્ એક માત્ર પ્રેમ જ છે. હરવમાં પ્રેમરૂપી
બીજ વાચ્ય વિના, પ્રેમનો અંકુર ઉત્પન્ન થતો નથી ! (૧૦)

આનંદ-અનુભવ હોત નહિં, બિના પ્રેમ જન ભન,

કે થઈ વિષયાનંદ, કે, પ્રજ્ઞાનંદ બખાન. ૧૧

એટલું બહુવળે કે, પ્રેમ વિના જનનમાં જ્ઞાનંદનો અનુભવ થતો જ નથી ! ખરી ભયેને
તે વિષયાનંદ હોય કે પ્રજ્ઞાસિત ખ્યાનંદ હોય ! એટલે કે, પ્રેમનો જ્ઞાનંદ સર્વોપરિ છે. (૧૧)

જ્ઞાન, કમંડુ ઉપાસના, સજ અહમિતિ કો મૂલ,

દકું નિકાય નહિં હોત, બિન, કિયે પ્રેમ અગુલ. ૧૨

જ્ઞાન, કમં અને ઉપાસના — એ બધાં અદંકારનાં મૂળ છે. પ્રેમને અનુકૂળ ભાં વિના
દા નિશ્ચય થતો નથી. (૧૨)

શાસ્ત્રન પકિ પંડિત બયે, કે મોલવી કુરાન,

શુષે પ્રેમ ભ-યે નહીં, કહા કિયે 'રસખાન'. ૧૩

શાસ્ત્રો અધીને પંડિત થયા, અથવા; કુરાન અધીને મોલવી થયા; પરંતુ 'રસખાન' કહે છે
કે, ભયાંકુષી પ્રેમ ભણ્યો નથી, ત્યાંકુષી એ બધું અભવાથી શું થયું ? અર્થાત્ પ્રેમને ભણ્યા
વિના બધું બર્થ છે. (૧૩)

હામ, કોષ, મઠ, મોહ, બધ, કોભ, દ્રોહ, માત્સર્ય,

ઈન સબહી તેં પ્રેમ કે, પડે, કહત મુનિવર્ય : ૧૪

કામ, ક્રોધ, મદ, મોહ, ભય, લોભ, દ્રોહ અને આત્સર્વ—એ પદાર્થો પ્રેમ દૂર છે, એમ મુનિવરો કહે છે. (૧૪)

બિન શુભ ભોજન કૃમિ ધન, બિન સ્વાસ્થ્ય હિત બાનિ,
શુદ્ધ, કામના તે સહિત, પ્રેમ સકલ 'રસખાનિ' ૧૫

રસખાનણ કહે છે કે, સાચા પ્રેમમાં મુજબ, શૌચ, રૂપ, ધન-અથવા કોઈ પણ પ્રકારના સ્વાચાર્યની અપેક્ષા રહેતી નથી એ તે સર્વેથી શુદ્ધ અને કામનારહિત હોય છે. (૧૫)

અતિ સુષ્ટમ કોમલ અતિક્રિ, અતિ નિવરો, અતિ દૂર,
પ્રેમ કઠિન સખ તે સદા, નિત ઇકસ્ય ભરપૂર ૧૬

પ્રેમ અત્યંત સુષ્ટમ, અત્યંત કોમળ તેમજ અત્યંત પાસે અને અતિશય દૂર છે. વળી પ્રેમ સર્વથી કઠણ છે અને નિરાંતર એકરસથી પરિપૂર્ણ છે. (૧૬)

જગ મેં સખ બાન્યો પદે, અરુ સખ કહે કહામ,

પૈ જગદીસ'રુ પ્રેમ ચક્ર, દોષો અકથ લખાય ૧૭

સંસારમાં સર્વ કાંઈ પ્રત્યક્ષ ગ્રેહ સહાય છે અને સર્વની ચર્ચા થઈ શકે છે; પરંતુ પરમેશ્વર અને પ્રેમ—એ જાને અદશ્ય અને અકથનીય છે. (૧૭)

જેહિ બિનુ બાને કષ્ટુકિ નહિ, બાન્યો બાત બિસેસ,

સોઈ પ્રેમ, જેહિ બાનિ કે, રહિ ન બાત કષ્ટુ સેસ ૧૮

જેને બાવધા વિના વિરોધ કાંઈ પણ બાધી સહાય નથી, તે જ પ્રેમ છે. અને જેને બાધી સેવાથી સંસારમાં બાધવાને માટે બીનુ કાંઈ પણ જાણી રહેતું નથી. (૧૮)

દાંપતિ મુખ અરુ વિષય રમ, પૂજા, નિષ્ઠા, ખ્યાન,

ઇનતેં પદે બખાનિયે, શુદ્ધ પ્રેમ 'રસખાન' ૧૯

રસખાનણ કહે છે કે, દાંપત્યમુખ (ત્રી-પુત્રપત્ન) મુખ અને અન્ય વિષયોથી ચતો રમ, પૂજા, નિષ્ઠા અને ખ્યાન—એ પદાર્થો જ્ય શુદ્ધ પ્રેમ દૂર છે. (૧૯)

મિત્ર, કલ્પ, મુખ'પુ, મુત, ઇનમેં સકલ સનેહ,

શુદ્ધ પ્રેમ ઇનમેં નહી, અકથા કથા સબિસેહ ૨૦

મિત્ર, પત્ની, ભાઈ અને પુત્ર—એ પદાર્થો સકલ સનેહ હોય છે; પરંતુ તેમાં શુદ્ધ પ્રેમ કોતો નથી એ શુદ્ધ પ્રેમની ચાત તે સર્વથી અવલગનીય અને સર્વથી ઉત્તમ છે. (૨૦)

ઇક આંગી બિનુ કાસ્નહિ, ઇકસ્ય મદા સમાન,

ગને પ્રિયહિ સર્વત્વ બે, સોઈ પ્રેમ પ્રમાન ૨૧

પ્રેમ સર્વે જોકાંગી, અકાસ્ચ, એકરસ અને સદા સમાન રહે છે. એટલે કે, પ્રેમને કાળ બાધા કરી શકતો નથી. જે પોતાના ખ્યાસને પોતાનું સર્વત્વ ગણે છે, તે જ ખરો પ્રેમ છે. (૨૧)

હરે સદા, આઠે ન કષ્ટ, સઠે સલે બે હોમ,

રહે એક રસં ચાકિ કે, પ્રેમ બખાનો સોમ ૨૨

જે પોતાના ખ્યાસથી નિત્ય ડરતા હોય અને એની ખસે કોઈ વસ્તુની કબજા કરે નહીં. જે વિશ્વસિ આવે તે બધી સદન કરે અને સર્વે પ્રેમ કર્યા પછી એકરસ (પ્રિયરૂપ) ઘડીને જ રહે, તે જ પ્રેમ પ્રકાશનીય છે. (૨૨)

પ્રેમ પ્રેમ સબ કોઈ કહે, કહિન પ્રેમ શ્રી ફાસ,
પ્રાંન તરફ નિકરે નહીં, કેવલ ચલત ઉચ્ચાર. ૨૩

પ્રેમ-પ્રેમ તો બધાંમ કહે છે; પરંતુ પ્રેમની ફાસ-પ્રેમનું બંધન-મળું જ કહિન હોય છે.
પ્રેમીના પ્રાણ, પોતાના પ્યારના વિચેત્રમાં તરફ છે; પરંતુ નીકળતા નથી; એ સમયે કેવલ
ઉચ્ચાર જ ચાલે છે. (૨૩)

પ્રેમ હરિ કો રૂપ છે, ત્યોં હરિ પ્રેમ સરૂપ,
એક હોઈ દે: એ હોઈ, ત્યોં સુરજ અરુ. પૂષ ૨૪

પ્રેમ, ઉચ્ચાર છે અને ઉચર, પ્રેમરૂપ છે. એ બને-પ્રેમ અને શીલિ-એક હોવા ખતા
સહ અને પૂષ-તકાલી નેપ ને નામથી સોની સ્વાં છે. (૨૪)

જ્ઞાન, ખ્યાન, વિદ્યા, મતી, મત, વિશ્વાસ, વિવેક,
બિના પ્રેમ સબ-પૂર છે, જમ જમ એક અનેક રખ

જ્ઞાન, ખ્યાન, વિદ્યા, શુદ્ધિ, મંતવ્ય, વિશ્વાસ અને વિવેક-એ બધાં પ્રેમ વિના મૂળ જેવાં
છે। જેવી રીતે જલત એક છે અને તેમાં અનેક પર્વતોનો સમાવેશ થાય છે, તેવી જ રીતે એક
પ્રેમમાં બધાંના સમાવેશ થઈ જાય છે. (૨૫)

પ્રેમ-ફાસ મેં ફાસિ મરે, સોઈ જિવેં સદાકિં,

પ્રેમ-મરમ બને બિના, મરિ કોઈ છવત નાકિં. ૨૬

જેમો પ્રેમરૂપી ફાસી-બંધનમાં પડીને મરી મજ છે, તેમો જ સદે છે. પ્રેમનો મર્મ
બધાંના વિના મરીને કોઈ પણ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરતા નથી. (૨૬)

જમ મેં સબ તેં અધિક અતિ, મમતા તનકિં લખાય,

પૈ જા તનકે તેં અધિક, ખારો પ્રેમ કહાય. ૨૭

સંસ્કારમાં સર્વથી વધારેમાં વધારે પ્રેમ સરીરમાં જેવામાં આવે છે; પરંતુ પ્રેમ તો આ
સરીરથી પણ વિશેષ ખારો કહેવાય છે. (૨૭)

એકિ યામે વેકુંક અરુ, હરિકું શ્રી નકિં ચાકિં,

સોઈ અંશોકિક સુદ, મુબ, સરસ સુપ્રેમ કહાકિં ૨૮

જેને પ્રાપ્ત કરી શીયા પછી વેકુંકની અને શીલિની પણ ચાલવા રહેતી નથી; તે જ પ્રેમ
બલોકિક, શુદ્ધ, કલ્યાણકારી અને સરસ કહેવાય છે. (૨૮)

કોઈ ચાકિ ફાસી કહવ, કોઈ કહવ તરવાર,

નેબ, બાલા, તીર કોઈ, કહવ અનેખી કાર ૨૯

સ્વખાનજી કહે છે કે, પ્રેમને કોઈ ફાસી-બંધન કહે છે; કોઈ તેને તલવાર કહે છે; કોઈ
તેને બરહી, બાણ અને તીર કહે છે અને કોઈ તેને વિવિધ ઘસ પણ કહે છે. (૨૯)

પૈ મિદાસ જા માર કે, શેમ શેમ બરપૂર,

મસ્ત જિયે, જુકતો વિરે, બને સુ અજાનુર ૩૦

પરંતુ આ ચારની મીઠાસ-શેમેશર બરપૂર થઈ જાય છે। જે ચારથી મસ્તો હોય તે છવતો
થઈ જાય છે અને પાતો હોય તે સિપર-ટકાર થઈ, તે પ્રેમમાં નકનુર-તલ્લીન ખતી જાય છે. (૩૦)

રૈ એતો ઠૂંદમ સુન્યો, પ્રેમ અજુબો ખેલ,
અંબાજી બાજી જઈ, દિલ કા દિલ સે મેલ ૩૧

પરંતુ અમે એ પ્રેમ સંબંધમાં કેવળ એટલું જ સાંભળ્યું છે કે, પ્રેમ એક વિલક્ષણ ખેલ છે અને ત્યાં પ્રાણની બાજી યાગી બન છે, ત્યાં એ હૃદયને હૃદયથી વિશાપ થાય છે. (૩૧)

સિર કાગે, છેદો હિયો, દૂક દૂક કરિ દેહુ,

રૈ યાકે ખદલે વિહસિ, વાહ વાહ હી લેહુ. ૩૨

રસખાનજી કહે છે કે, પ્રેમને ખદલે મરતક કાપી નાખો, હૃદયને છેદી નાખો અને શરીરના ડુકડેડુકયા કરી નાખો; પરંતુ એવા ગદ્યામાં તમે હસીને 'વાહવાહ!' જ પ્રાપ્ત કરો. (૩૨)

અદ્ય કહાની પ્રેમ ડી, બનત હેલી ખૂબ,

દો વનહૂં જદે એક ભે, મન મિલાઈ મહખૂબ. ૩૩

પ્રેમની કથા અવર્ણનીય છે. જ્યેને એકમાત્ર હવસાએ જ શારી રીતે બળ્યી છે. પ્રિયમાં મન મેળવવાથી ત્યાં જે શરીર ખસ એક થાય છે. (૩૩)

દો મન ઠક.હોતે સુન્યો, રૈ વહ પ્રેમ ન આહિ,

હોઈ જાએ દે વનહૂં ઠક, સોઈ પ્રેમ કહાહિ. ૩૪

એ મન એક યતાં સાંભળ્યાં છે; પરંતુ તે પ્રેમ નથી હોતો. ત્યારે જે શરીર એક થાય, તે જ સાચો પ્રેમ કહેવાય છે. (૩૪)

યાહી તેં સળ મુજિ તેં, લહી જમુઈ પ્રેમ,

પ્રેમ ભયે નસ બહિં સળ, ઈધે જમત કે નેમ. ૩૫

આ કારણથી પ્રેમે મુજિ વગેરે ગદ્યાંથી અધિક મહત્તા પ્રાપ્ત કરી છે. પ્રેમ થયા પછી જમતના અધિકા ગદ્યા નિયમે દૂર થઈ જાય છે. (૩૫)

હરિ કે સળ આપીન રૈ, હરિ-પ્રેમ આપીન,

યાહી તેં હરિ આપુહી, આહિ જમુપન ઈન. ૩૬

ભગવાનને વસ ગદ્યા સંસાર છે; પરંતુ ભગવાન પ્રેમને આપીન છે, માટે જ ભગવાને સ્વયમેવ એ પ્રેમને મહત્તા આપી છે. (૩૬)

વેદ-મૂલ સળ ધર્મ યહ, કહે સળે શુતિસાર,

પરમ ધર્મ હે તાહુ તેં, પ્રેમ એક અનિવાર. ૩૭

સર્વ શુતિઓનો સાર એ છે કે, વેદોના ધર્મ જ યજ ધર્મ છે; પરંતુ એવાથી ખસ અધિક અનિવાર્ય પરમ ધર્મ એક પ્રેમ છે. (૩૭)

અધિ જસોલ નંદ અડુ, ગ્વાલ બાલ સળ ધન્ય,

રૈ યા જમ મેં પ્રેમ કાં, ઝોપી ભઈ અનન્ય. ૩૮

ત્યે કે, યશોભજ, નંદરાવજ અને ધર્વ બ્રાહ્મણોનો પ્રેમ ધન્ય છે; પરંતુ આ વિષયમાં શ્રીમોખીજનો પ્રેમને કારણે અનન્ય થયાં છે. (૩૮)

યા રમ ડી કજુ માધુરી, જીધો લહી સતહિ,

પાવે જહુરિ મિહાસ અસ, અજ દબે કા આહિ ? ૩૯

શ્રીમદ્ધીમનોના પ્રેમસંતુ કોડુ કે માધુર્ય ઉદ્ભવને મળું. જેની જેમણે ગદ્ય જ પ્રસંગ
હરી, ખૂબ હવે પીચું કાંઈ છે કે, જે જે માધુર્યને પ્રાપ્ત કરી શકે? (૩૯)

અવન, દીરતન, 'સ્વચ્છતિ', એ ઉપજત સોઈ પ્રેમ,
શુદ્ધાશુદ્ધ વિશેષ તે, દ્વૈવિધ તાકે નેમ. ૪૦

અવન, દીરતન અને સ્વચ્છતિ મનુષ્યમાં જે આવ ઉત્પન્ન થાય છે, તેને જ પ્રેમ કહેવાય છે.
શુદ્ધ અને અશુદ્ધ-એવા બેદેવી તેના બે પ્રકારના નિષય છે. (૪૦)

સ્વાસ્થ્યમૂલ અશુદ્ધ ત્યો, શુદ્ધ સ્વભાવવતુદ્ધલ,
નાસ્થાદિ પ્રસ્તાર કરિ, કિયો બહિ ઠો તલ. ૪૧

જે પ્રેમના મૂળમાં સ્વાસ્થ્ય રહેલું હોય છે, તેને અશુદ્ધ પ્રેમ કહે છે અને જે સંબંધરહિત
મૂળ સ્વભાવને અનુકૂળ હોય છે, તેને શુદ્ધ પ્રેમ કહેવામાં આવે છે. નાસ્થાદિ આદિ યુનીયસેએ આ
પ્રેમને પ્રસ્તાર આદિ કરીને તેની વૃથાના કરી છે. (૪૧)

સ્વસ્થમ, સ્વાભવિક ઝિના સ્વાસ્થ્ય અચલ મહાન,
સથા મોહસ્થ શુદ્ધ સોઈ, પ્રેમ જડે 'સ્વખ્યાન' ૪૨

સ્વખ્યાનશ કહે છે કે, જે સ્વસ્થ (અનંદમય), સ્વાભવિક, નિઃસ્વાર્થ, અચલ અને મહાન
હોય છે, તથા જે મોહસ્થ-નિર્વિહાર અને શુદ્ધ હોય છે, તે જ સાચો પ્રેમ છે. (૪૨)

જાતે ઉપજત પ્રેમ સોઈ, બીજ કહાવત પ્રેમ,
જામે ઉપજત પ્રેમ સોઈ, સેત્ર કહાવત પ્રેમ. ૪૩

જેનાથી પ્રેમ ઉત્પન્ન થાય, તે જ પ્રેમનું 'બીજ' છે; અને જેમાં પ્રેમ ઉત્પન્ન થાય તે જ
પ્રેમનું 'સેત્ર' કહેવાય છે. (૪૩)

જાતે ખાજત, ખલત મનુ દૂલત, ફલત મહાન,
સો સખ પ્રેમ કિ પ્રેમ જલ, કલત સસિક 'સ્વખ્યાન'. ૪૪

સરસિ-પ્રેમી સ્વખ્યાનશ કહે છે કે, જેનાથી પોષિત થઈને કયો કયો રહે છે, વધે છે, ફળે
છે, ફળે છે અને મહાન થાય છે, તે સર્વ પ્રેમ જ પ્રેમ છે. (૪૪)

વહી બીજ, અંકુર વહી, મોહ વહી આધાર,
મલ, પાવ, ફલ, ફલ સખ, વહી પ્રેમ સુખ-સાર. ૪૫

જો પ્રેમ જ બીજ છે, જો જ અંકુર છે, અને મોહ માત્ર આધાર ખજુ જો જ છે, યજ,
પાન, ફલ અને ફળ-એ સર્વે સુખના સારસ્વ પ્રેમ જ છે. (૪૫)

જો જાતે, જામે બહુરિ, જા કિત કલિકત ઝેસ,
સો સખ પ્રેમ કિ પ્રેમ હે, જજ 'સ્વખ્યાન' અસેત્ર. ૪૬

સ્વખ્યાનશ કહે છે કે, જે પ્રેમ જેનાથી અને જેમાં ઉત્પન્ન થાય છે તથા જેને કારણે તેને
મહત્તા મળી છે, તે સર્વ પ્રેમ જ પ્રેમ છે, અને જાત તે પ્રેમથી જ પરિપૂર્ણ છે. (૪૬)

મરજ-મરન-રૂપ વહ, પ્રેમ જડે 'સ્વખ્યાન',
કર્તા, કર્મ, કિયા, કર્મ, આપકિ પ્રેમ જખ્યાન. ૪૭

રસખાનણ કહે છે કે, આ પ્રેમ કાવ્ય અને કારણરૂપ છે. કર્તા, કર્મ, ક્રિયા અને સાધન-એ સ્વયં પ્રેમની પ્રથમ શરૂ છે. (૪૭)

ટોપિ ગદર દ્વિત-સાહજી, દિલ્લી નગર મસાન,
છિન્નદિ બાદશા-બંસ કી, ઠસક હોરિ 'રસખાન.' ૪૮

રસખાનણ કહે છે કે, મેં સ્વામિવને માટે વિષ્ણવ (નળવે) યતો નિહાળીને અને દિલ્લી નગરને રસખાનવત્ સમજીને એક ક્ષણમાં જ બાદશાહી પરિવારની મમતાને ત્યાગ કર્યો. (૪૮)

પ્રેમ-નિકેતન શ્રીખનદિ, આઈ ઝોવર્ધન ધામ,
લક્ષ્મી સરન ચિત ચાહિ કે, મુગલ સરૂપ લલામ. ૪૯

પછી પ્રેમ-ધામ શીજંદાવનમાં આવી ગયો. ત્યાં મોગોવર્ધન ધામમાં આવીને શ્રીસધા-કૃષ્ણનાં સુંદર યુગલસ્વરૂપનું ચરણ સ્વીકાર્યું અને ચિત દર્ષને એ ભગવત્સ્વરૂપમાં પ્રેમ કર્યો. (૪૯)

તોરિ માનિની તેં દિયો, ફોરિ મોહિની-માન,
પ્રેમદેવ કી છબિદિ લખિ, ભયે મિયો 'રસખાન.' ૫૦

માનવતી પત્નીમાંથી મન મુક્ત કરીને અને મોહિની જીવપત્નીના માનને ત્યાગ કરીને પ્રેમદેવ શ્રીકૃષ્ણમાંની જખી જોઈને, રસખાનણ કહે છે કે, હું તેને ભક્ત બની ગયો. (૫૦)

વિદ્યા સાગર રસા ઈદુ મુબ બરસ સરસ 'રસખાનિ',
'પ્રેમવાટિકા' સચિ રુચિર ચિર દિય-હરખ બખાનિ. ૫૧

રસખાનણ કહે છે કે, મેં સં. ૧૬૪૧ ના મુબ વર્ષમાં રસની ખાણરૂપ આ સુંદર 'પ્રેમવાટિકા' (પ્રેમની કૂલવાડી)ની રચના કરી છે; જે ચિરકાલપર્યંત રસિકજનોના હૃદયમાં નિવાસ કરીને તેના હર્ષની પ્રથમ શરૂ કરી. (૫૧)

અરબી શીહરિ-અસ્ન-મુમ-પદુમ-પશગ નિહાર,
ગિચરદિ વામે રસિકવર, મધુકર-નિકર અપાર. ૫૨

મોહરિનાં યુગલ ચરણારવિદના પંચને જોઈને એ ચરણકમલમાં મેં આ 'પ્રેમવાટિકા' અર્પણ કરી છે. જેમાં રસિકજનો રૂપી જનરસમૂહ મુંબરવ કરતા વિચરણ કરે. (૫૨)

(શેષપૂર્વ)

સધા-માધવ સખિન સંગ, બહરત કુંજ-કુટીર,
રસિકરાજ 'રસખાનિ' તહુ, કૃજત કોઈલ ઠીર. ૫૩

પ્રેમવાટિકાની કુંજ-કુટીરમાં સખીજનો સાથે શ્રીસધા-કૃષ્ણ યુગલ સ્વરૂપ વિહાર કરે છે અને 'રસખાનણ' રૂપી રસિક ભક્તજનો ત્યાં કોડિયા અને મુક સ્વરૂપે કુંજન કરી રહેલ છે. (૫૩)

- ભક્તિપ્રિય

સંસ્કૃતમાં અગરની સંખ્યા ૪ (ચાર) માનવામાં આવી હોવાથી 'પ્રેમવાટિકા'ની રચના સં. ૧૬૪૧માં (સરલગમનપદ્યાત તરત જ) મધુ હોવાનું નિશ્ચિત છે.

(નુબો : 'નાગરીપ્રચારિણીપત્રિકા' વર્ષ : ૯૦, અંક : ૧, પ. ૩૦ ઉપરનો શ્રી. નરેન્દ્રજીનો લેખ)

श्रीमद्विद्वेश प्रभुचरण कृत
'गुप्तरस' की टीका

श्रीकृष्णाय नमः । अथ श्रीमत्प्रभुचरण श्रीगुसांशुल कृत 'गुप्तरस' के श्लोकाय,
संस्कृत में जो अक्षर हैं तिनके ज्ञापनाय भाषा में लिख्यतु है.

कोई सभे श्रीठाकुरल्ल भांय वरस के अपुने वयस्य के संज भेलत मज्जकतान के
आंगन में पधारे. वा समय कोइ बहुत जो मूढभावभावित हते, तिनने श्रीठाकुरल्ल के आलकन
ते नबारे करि अपुने अंक में करि जोइ जिठाव समस्या में आल अवस्था में प्रौढ सीतारस
के भोग करिबे की शिक्षा करत हैं.

पयोदध्याभिक्षाभिनयवृत्तगोधूमयल्लुके-

क्षवेरकुट्टेर्विविपरसभोक्त्वां त्वतिमुदा ।

विधायाधावांथाविततुविरधारेषु रदसि

प्रियं प्राप्यांकरुषं किमपि समवेत्प्रियतमा ॥१॥

टीका : इध अतु हठी तथा मनोहर के बहुधा तथा अथ के ताये भूत तथा जोइ
और सना और पुरा-ये सप्त पदार्थ अति उत्तम प्रकार से, जो हमारे जनार्थ अतु विविध
रस भोजन से, अंतःकरणपूर्वक कोशंत के बिषे, जो रस के उचित, जैसे पात्र तामे
संपादन करिके भरे हैं. ताके के प्रिय! हमारे पोषक जो तुम, सो विविध रस से भोजन
करे. (१)

अस्मदीय पदार्थानां भोगः कार्यस्त्वयैव हि ।

अन्यथा भागभर्थाहा नृक्षत्यंभोज्यलोचन ॥२॥

टीका : हमारे जो दोय प्रकार के पदार्थ-कोइ तो देहसंभंधी सर्वांग में सुख, नयन,
भृक्षुटी, कपोल, वल्लस्थल, उदर, हस्त आदि अवयव हैं, और दूसरे बहुसंभंधी नवनीत, इध,
हठी आदि सामग्री, ताके तुम ही भोग करे. अन्यथा कहत न करोगे तो भाग की भर्थाहा
जो 'पुष्टिभार्गीव्य लुपन की समर्पि जो वस्तु, ताके हम अरोमत हैं अतु ता करि हम
पुष्ट होत हैं, जैसी जो तुम्हारी प्रतिज्ञा, हे अंभोज्यलोचन (कमलनयन) ! वह भर्थाहा नष्ट
कहत नाश होयगी. (२)

धतरौपयोगरांकादवदहनमुत्पत्तमंतरस्माकम् ।

स्वांगीकृतिनखल्लदेः शिशिरव आपीचनप्राण ॥३॥

टीका : तुम्हारे भोग वस्तु के धतर भोग करे, जैसी जो शंकाइय धवानल, ता करि
हमारे अंतःकरण तप्त भये हैं, तिनके तुम्हारी सामग्री भोग अंगीकार इपी जो नवीन

मेघ, ता करि हे गोपीजनप्राण ! शीतल करे. (3)

लोकविगीतं नाथ स्फुटमस्मान्निस्तथाकृतं तस्मात् ।
बालकस्तीक्ष्णप्रोक्ष्या त्वयैव संपादनीयः सः ॥४॥

टीका : हे नाथ ! लोभन विषे ले निहित ताकें हम स्फुटं क्रियो कइत प्रजट क्रियो ताते तुमहु बालक श्री लीला भक्त ले क्रियोर लीला ता करि रस संपादन करेनो. (४)

कार्या व्यावृत्तिरन्वेषां बद्धास्मान्निस्तथा तथा ।
यतनीयं समुद्देशबालस्तीक्ष्ण मिथाम्बर ॥५॥

टीका : अन्य ले गोपीपतिन के कार्य के उद्यम ले कृपि-गोप्यारण्य सभे ता भिरियां हम तुम्हारे पुखावने के वल करेजे. तुमहु ता सभे निर्भयई आचरण्य करेगे. (५)

स्वतन्त्रमयेऽप्यतिसूक्ष्मे पात्रे नवनीतमतिनयं निहितम् ।
शोण्ये शिकथे मुक्तागुच्छवति त्वं वृद्धाण्येहम् ॥६॥

टीका : इपे के पात्र, न बहुत छोटी न बहुत बड़ी, तामे सध के वृत्पत्र कथे से नवनीत, से बाल पाट के ले छोटा मुक्तागुच्छसंयुक्त, वा पर धरि राभ्यो है, से तुम ही बहल करेजे.

या करिके भया अक्षत ले कसूणी साड़ी, मुक्ता के आचरण्य संयुक्त है, तिनके रसबहल श्री समस्या करत है. (६)

तन्निकटे त्वन्वित सिता ह्येमे पात्रे तद्विभे शिकथे ।
सुश्रुतं पयः सितैलाकपूरयुतं च पेषं तत् ॥७॥

टीका : वा के निकट सुवर्ण के कटोरा में मिश्री है, ता संयुक्त पिछले श्लोक में कथे ले नवनीत, ताकें अशोयो. अरु ता के निकट के छोटा वा पर जोहोत ओटयो हथ, मिश्री-क्रीलायत्री-वरास संयुक्त धरयो है, वा के तुम पान करे.

वा करि प्रगल्भा ले ज्ञातपांचना अक्षत, तिनके रसबहल श्री समस्या करत है. (७)

दुग्धमध्ये ह्येवपात्रं सूक्ष्मं निहितमन्वित मे ।
सुभेन तेन तत्पानं कुरु मत्प्राण्यवहलम् ॥८॥

टीका : जेपर के श्लोक में कथो से हथ, वा के मध्य सुवर्ण के छोटी कटोरी धरी है, तासें हे हमारे आण्यवहल ! वा हथ के सुभेन तुम पान करे.

या करि पछेले श्लोक में कथे ले अक्षत, उनके अधरपान की समस्या करत है. (८)

शुतदुग्धमोदकानि त्रियैतदुपरिस्थे कनकमथपात्रे ।
निहितानि सति मुह्यितान्यस्माकं त्वत्करनेपर्यात् ॥९॥

टीका : जेपर कथो ले हथ, वा पर सुवर्ण के पात्र में ओटयो हथ के ले गोवा

ता के लडुवा धरे हैं, या को ले प्रिय ! तुम्हारे कर को रक्ष्य होयगे। तब हमारे सुभकारी होयगे।

या हरि वा ही लक्ष्य के कुवस्थानं प्री समस्या करत है. (६)

मुमुक्षुतमादिपदुम्भयटोऽपि तन्निकटमेव च शिकथयतः प्रिय ।
 रुबिर मृष्टमथपात्रपिधानमुकुत्तव मुभांलुब्धसंगममिच्छति ॥१०॥

टीका : आधी जॉति जोटयो बहिय को हूध, ताके घट. सो ले प्रिय ! वा ही के निकट ले स्थाम पाट को छोडा, ता पर हसरो रुबिर मृष्टमथ कटोरा, सो दीपि राभ्यो है, सो तुम्हारे ही सुभकभल के अंगम प्री प्रयत्न करत है.

या हरि स्वाभवअपरिधान सेां ले कौर्ध मुग्धा लक्ष्य, तिनके सर्वाज के सुत्वाह रस तथा गलस्यल मु'पन के रसअहस्य प्री समस्या करत है. (१०)

येदेकं एवमुभांभोले यथा जाति तथा कृतम् ।
 तद्विदित नवे शिकथेकं दीपीलभोदम् ॥११॥

टीका : वा ही के आगे अजिम छोडा पर कर्कटीणील (सकरटेयी के नील) के लडुवा धरे हैं, सो येक येक कुरिके' आछो लगे वा ही प्रकार सेां आपके श्रीमुभ मे' धरा.

या हरि अज्ञातधोवना ले मुग्ध लक्ष्य, तिनको अन'दुरित ले पीलरस, ताके अहस्य प्री समस्या करत है. (११)

सितालवंगकपूरशिविरातिप्रभुतमम् ।
 नवमृष्टमथपात्रेऽस्ति इधिशिकथेऽतिविजिते ॥१२॥

टीका : मिश्री अरु लवंग, अरु परासाधिक सेां भिलायो ले इधि सो नवीन मृत्तिकापात्र मे' धरिके' अतिविजित (रजयेर'गी) छोडा पर राभ्यो है.

या हरि त्रिगुणरसमुक्त ले प्रोढा लक्ष्य, तिनको रस ले किञ्चित् पाटो-मधुरो है, ताके अहस्य को सूजन करत है. तहां त्रिगुण-सो मिश्री सात्त्विक, लवंग तामस, अरु परसस राजस गुण के सापक है. (१२)

केवलसेनेन इमा यथासिक्तं मुमुक्षुतं पथः ।
 तदर्थ्यतवनं दवाडु शिकथेऽस्ति नवकांठने ॥१३॥

टीका : केवल इधि सेां लभायो ले अति जोटयो हूध, ता हरि सिद्ध लयो ले धनीभूत सुत्वाह इही, सो नवीन सुवर्ण'त'तु के छोडा पर धरयो है.

या हरि ज्ञातधोवना ले गुरु प्रमत्ता लक्ष्य, नरीवअथ'मुक्त तिनको रस ले केवल गोरसतुल्य, ताके अहस्य प्री शिक्षा करत है. (१३)

त्राधूमव्यसृष्टपिष्टाभिज्ञा मिष्टा विनिर्मिता रश्म्याः ।
ते संत्वर्याः भीतप्रवेतरश्मभ्यु शिक्येषु ॥१४॥

टीका : जेहूँ और अना के पिष्ट, तथा ताते दुध में भटाई करे तो जे इष्टयो दुध, ता करि जनी जे अति उत्तम डोमल रसाळ जे सामग्री पकावे, सो भीत प्रवेत रश्म भीका पर धरे हें.

या करि त्रिगुणु लक्षा, जे भीत लहेना, प्रवेत सादी जेव रश्म अंशुकी अति वल-परिधानसंयुक्त हें, तिनके उदरस्थल, अमर, दुब जे डोमल अम. तिनके रसास्वाड ही शिक्षा करत हें. (१४)

निर्गमित शिकमसमूहांतरदुषे' पदरागमय शिक्ये ।

तत्र स्तः सिम्भरिभोश्च नवभृशमयधानयोन्याश्च ॥१५॥

टीका : उपर उहे जैसे जे भीका के समूह, ताके मध्य जे लाल भूमिमय भीका, ता पर दोय प्रकार के सिम्भरन-जेक अत्यंत मिष्ट, जेक किञ्चित् भाटी, सो हें प्राणनाथ । नवीन सुत्तिका के धान में धरी राख्यो हें.

या करि भक्षु के आलस्य संयुक्त जे दोय प्रकार के लक्ष-जेक अज्ञातयौवना मध्या केवल मिष्ट रश्मय, जे में शीडाकुरल के अम नहीं होत, अरु जेक सातासात यौवना मध्या जे किञ्चित् भाटे रश्मय, अके रसमदक्य में भाड़ी सो अम होत हें, जैसे जे लक्षा तिनके रसास्वाड के सूचन करत हें. (१५)

संमितभूताद्देकं जंजीरकृतः सत्करीरारिः ।

अतिरोषकस्तकमिमसिक्येऽस्ति नवांशुदरश्म ॥१६॥

टीका : आम तथा अकरक तथा नवीन नींबू तथा निजोरा तथा सुंकर टेंटी अति संधाने जे अतिरोषक, सो हें नवधनरश्म । ताके अजिम भीका छिपर धरे हें.

या करि मोडा लक्ष जे विजित लावसंयुक्त, मानवटी, तिनके रसमदक्य ही समस्था करत हें. (१६)

उष्णैः स्थितसिक्तमानामभे'भनेकप्रसाधनानि परम् ।

पीठालुभललांडान्वरमाणिः संति निहितानि ॥१७॥

टीका : अति उष्णस्थित जे भीका, ताकी प्राप्त हे किये हम अनेक साधन करि पटड़ा तथा उष्णपल तथा और ऊँठ राजे हें.

या करि बहं जतायो जे जे लक्ष गृहाधिक ही मर्वाड सो दुग्गाभ्य हें, तिनकी प्राप्त जे द्वारा जेनि अनायास सो दोय जैसे हम अनेक मध्या तत्पर करि राजे हें. जे उपाय करि बहं रस के अजीकार करे. (१७)

पुंडसमवापकायाः संवापास्थानिचित्र इपांताः ।

याव्यरश्माने निहितानि महानसे संति ज्युषिष्ठा ॥१८॥

टीका : पद्वय ने कटु, अम्ल, तिक्त, लवण, कषाय और मधुर-वह ने पद्वय पदार्थ और संवायो (धीर, हृदी, दारि, सज्जी) आदि विविध सामग्री ने योग्य स्थान, ने पाकशाला, तहो भूमि पर धरि है.

या हरि श्रीकापुरल सत्रि सकेत करि हई और होर पधारै, तत्संभो भी उत्पन्न भयो ने अविता के मान, जैसे ने निर्गुण अकल, तिन के पद प्रकार के रस की समस्या करत है. भूमि पर धरि के अतिप्रान वह ने सज्जी भूमि पर अग्नि के पास रहत है. तब तापी सुस्वाद रहत है. और मान हू तातो होत है. (१८)

त्रिषड्वयि ते पदार्थस्त्रिषडैकलोभ्या मे ।
 त्वं सुदेवायु सशोभा वयस्यपुंहेः सदागत्य ॥ १९ ॥

टीका : येक तुम्हारे सोम लावक ने सज्जी पदार्थ, ताके हृम हृदोर्तोर्ध वधुन करे ? सो सज्जी पदार्थ तुम ही शीघ्र सोम करे, अरु वयस्य लावक अपने तथा लवडेवयु के संज है आवनो.

या हरि वह जतायो ने औषधी सामग्री के सोम समथ वेक भवार्थरूप ने लवडेवल संज होय, अरु कर के लाकर ठारे रहे तो औरन के वह बीला के संभ्यज्ञान न होय, अरु छोटे लावक ने रहस्यबीला ते अज्ञात है सो तो अंतर के वृत्तंत तो कछु जाने में नौही, अरु हमरे-तुम्हारे शीघ्र उत्तर-प्रतिउत्तर के सहाय होय रहेजे. (१९)

शेषमेवाभिला नोतःसहनेषु त्वदाराया ।
 संपाथ निहितः सति पदार्थां आपयमुंहर ॥ २० ॥

टीका : या प्रकार के समथ पदार्थ, ने हमसेो हमारे धरन में तुम्हारी आज हरि के है आपयमुंहर ! अनेक पदार्थ संपादन करि धरे हैं.

या हरि वह जनायो ने है आपयमुंहर ! हमारे प्रत्यंजुपी ने सज्जी पदार्थ, सो सोमजन तथा स्नानादिक तथा सुंजार-वस्य भारव में तुम्हारी आज धरि पोषण अरु सिद्ध करि राये हैं. अरु अहू के लोपयोग नहीं भयो है. अस्वार के सोम तो अंतरंज भावा के विहास हरि लोक प्रतीति मात्र ही है, न तु साक्षात् सोम है. ताते तुम मेजि ही अंगीकार करो. (२०)

वत्सविभोक्तं तोकप्रपीठनावनपवृत्तमिव यात्र ।
 सकेतमस्मदीयं सज्जापवितुं स्वया कथंभ ॥ २१ ॥

टीका : वत्स के असमथ जोल देने, अरु छोटे छोटे ने लावक तिनके पीठत करि रहन कशावावने-धृत्वादि ने उच्छ्रंजल बीला तुम्हारी ने ताके हमारे-तुम्हारे ने सकेत ताके जोपनाय वे ही उच्छ्रंजल बीला के आचरण करने. (२१)

अस्माभिरभुपाजंभ भुवादेयस्तदर्थकः ।
 आतुपाहाण्यतिकटे प्रदधामस्तनां तद्वपिष ॥ २२ ॥

टीका : हम तुम्हारे अर्थ उपासना होय तैसे ही श्रीमातृवरण के निकट आनि
 रहेगे, और उहाँ हू या भिष करि हमको तुम्हारे दर्शन होयेंगे. (२२)

अधिकं किं तु वक्रतल्पं यथैवात्म-भनोरथः ।
 पूर्णं भवत्यस्य नाथ तथा परशवभातुराः ॥२३॥

टीका : अधिक हम कहा विज्ञप्ति करे ? जैसे हमारे भनोरथ हैं, सो हे प्राणनाथ !
 का प्रकार पूर्ण होय तैसे ही अवश्य तुम आवश्यक करा. (२३)

यद्यपि लौकविभीतं मन्देशसूनोस्तवेदशं करणम् ।
 निजजनहृदयानां प्रदायकवाहतिप्रसाध्यम् ॥२४॥

टीका : मन्देशसूनो ! तुम्हारे जो आवश्यक जो यद्यपि ले जन में निहित है; परंतु
 तुम्हारे जो निजजन तिनके तो हृदय के आनंददायक अरु अत्यंत स्तुति करवे जोग है. (२४)

धरुणं स्वीयभृद्धेऽपि च कथं च ततश्चैव व्याख्यभोग्भ्यं ते ।
 साक्षात् स्नेहातिरथात्सवे' त्वां लालयिष्यति ॥२५॥

टीका : या प्रकार अपने गृह विषे हू केजि केजि समय तुम उच्छ्रंभल लीला के
 आवश्यक कराये तब तुम्हारे तौर्ध जोहोत असात जालक अनिके' सज केर्ध अर्थत स्नेह
 करेजे अउ जोहोत लखवेजे. (२५)

अस्मदीयभक्तिं लक्ष्मीं तेन तत्र ब्रह्मते न परस्व ।
 कस्य चित्तु भविष्यति क्षुद्धिर्दोष धृत्यभलवस्तुनिसर्गात् ॥२६॥

टीका : हमारे जो समय हैं सो सज तुम्हारे हैं, न तु पराये हैं, ताते' याके ब्रह्म
 करिये में और हाहुकों क्षुद्धि होय नही होयजे। और वे वस्तु स्वभाव ते' निर्दोष ही है. (२६)

न सास्वत्यन्वेषोऽपि प्रियावशेभारण्यरेखुरेभ परम् ।
 श्रीनिर्भुयोऽतिशोभ्यं सर्वाभिसं वेत्ति वृत्तांतम् ॥२७॥

टीका : या वृत्तांत के और केर्ध अनत नही है, हे प्रिय ! तुम्हारे अरुणारवि
 की रेलु पर जो ये श्रीनिर्भु (चंद्रावली), सो ही बह सज जोभ्यं वृत्तांत अनत हैं. (२७)

धृति प्रियतमा मुष्पन्नवशो भु ।
 रसायणमिवापीय तथैव प्रलुराचरत् ॥२८॥

टीका : या प्रकार के प्रियतमा-वज्रमकान के जो भूष, तिनके मुष्पन्नव के भुपु
 वचन जो रसायनतुल्य, ताकों मुनिके श्रीहापुरलने वा ही प्रकार आवश्यक कियो.

तहाँ रसायनरूप वचन रहे ताको अभिप्राय बहु जो रसायन है सो पुरुषार्थदायक
 है, अउ धनिके वचन-रसायन सो हू साक्षात् जालकदशा में श्रीहापुरल को रसायनोप लये
 ताते. (२८)